जीवन चरित्र.

सुरेन्द्र प्रताप अग्रवाल

# महाराजा अग्रसेन

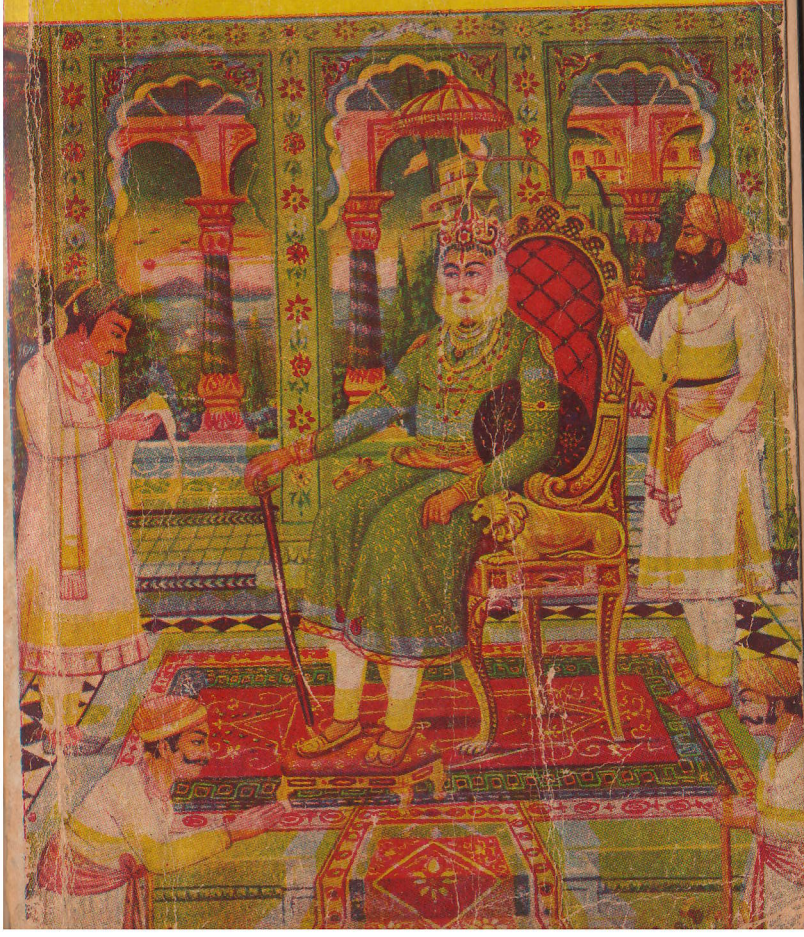

आनन्दी
५/४/७५.

प्रस्तुत लघु पुस्तिका

अग्रवाल वंश प्रवर्तक

# महाराजा अग्रसेन

जीवनचरित्र

महामहिम उपराष्ट्रपति

## श्री ब० दा० जत्ती को

अखिल भारतीय अग्रवाल प्रतिनिधि सम्मेलन के

## शुभ अवसर पर

दिनांक— रविवार ६ अप्रैल १९७५

को सादर भेंट।

धर्म भवन के संरक्षक तथा अग्रवाल प्रतिनिधि सम्मेलन के संयोजक ला० रामेश्वर दास गुप्त का अग्रवाल समाज अत्यन्त आभारी है। जिन्होंने यह शुभ आयोजन करके अग्रवंश समाज को उचित गरिमामय मार्ग दर्शन देने की प्रेरणा दी है।

लेखक —

# महाराजा अग्रसैन
# अग्रवाल समाज के प्रवर्तक

महाराजा अग्रसेन का इतिहास अग्र वंश के प्रवर्तक क रूप में ऐतिहासिक तो है ही, साथ ही भारतीय प्राचीन इतिहास की भी एक भव्य झाँकी प्रस्तुत करता है। महाराज अग्रसेन का काल ईसा पूर्व ५४२७ वर्ष से प्रारम्भ होता है। प्रस्तुत पुस्तक में महाराजा अग्रसेन के पूर्व वंशजों के काल का भी वर्णन है जो कि उनसे भी हजारों वर्ष प्राचीन है। इस प्रकार प्रस्तुत पुस्तक सामाजिक ही नहीं अपितु ऐतिहासिक महत्व की भी बन गई है।

—लेखक

प्रकाशक : गुप्ता पाकेट बुक्स,
रामजस रोड, नई देहली-५

आवरण : भारती

लेखक : सुरेन्द्र प्रताप अग्रवाल
बी० ए०, एल० एल० बी०

संस्करण : १९७५

सर्वाधिकार : सुरक्षित

मुद्रक : राजेश प्रिंटिंग एजेन्सी द्वारा
नीलिमा प्रिंटर्स
चर्खेवालान, दिल्ली-६

# दो शब्द

अग्र वंश के प्रवर्तक महाराज अग्रसेन का इतिहास प्रकाशित करते समय एक गर्व सा अनुभव होता है । प्रस्तुत पुस्तक का इतिहास महाराजा अग्रसेन के पूर्वजों से प्रारम्भ होकर ईसा पूर्व ५५२७ पर समाप्त होता है। ईसा पूर्व ५५२७ में महाराजा अग्रसेन का स्वर्गारोहण हुआ था।

इस पुस्तक का दूसरा भाग महाराजा अग्रसेन के वंशजों का इतिहास भी शीघ्र प्रकाशित किया जायेगा। लेखक ने इतिहास की खोजबीन के पश्चात सिद्ध किया है कि महाराजा अशोक, महात्मा भर्तहरि, विक्रम सम्वत् के प्रर्वत्तक महाराजा विक्रमादित्य, महात्मा बुद्ध, महाराजा चन्द्रगुप्त, महाराजा नन्द आदि अग्रसेन के वंशज थे।

हमें आशा है कि हमारे प्रयास अग्रवंश के साथ-साथ ऐतिहासिक दृष्टिकोण से कम महत्वपूर्ण सिद्ध नहीं होंगे।

—प्रकाशक

# निवेदन

मेरे पूज्य पितामह लाला भानमल गर्ग का अग्रवाल समाज से विशेष प्रेम रहा है। अनुमानतः सत्तर वर्ष पूर्व उन्होंने अपने गर्ग परिवार का चिर इतिहास जानने का प्रयत्न किया। अथक लग्न व भरसक प्रयत्न स्वरूप वह सन् १७०० ई० तक का पारिवारिक इतिहास ढूँढने में सफल हो गये। सन् १७०० का युग मुगल-कालीन बादशाह औरंगजेब का समय था।

उन्होंने अपने इस अकथनीय परिश्रम को चिर स्थाई रूप देने के लिए गर्ग परिवार से सम्बन्धित आगरा के निकट सिकन्दरा-बाद के सती मन्दिर में वंश-वृक्ष के रूप में चित्रकारों द्वारा सुरक्षित कराने का प्रयत्न किया। उनका प्रयत्न आज भी दर्शनीय है।

गत दिसम्बर १९७४ ई० में, मेरे अनुज भ्राता सत्येन्द्र प्रताप के पुत्र का मुण्डन समारोह के अवसर पर मैं सती मन्दिर की मुँडेर पर बैठा था। वहीं मेरी भेंट उसी गांव के कुछ वृद्ध व्यक्तियों से हुई।

उन वृद्ध सज्जनों ने याद दिलाई हमारे ताऊ लाला महेशचन्द्र जी गर्ग की जिन्होंने अपने बड़े भ्राता ला० इन्द्रचन्द्र गर्ग तथा छोटे भ्राता ला० रमेशचन्द्र गर्ग के सहयोग से उसी सती मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया था।

वहीं बैठे-बैठे मेरे हृदय में अग्रवंश का इतिहास लिखने का विचार मस्तिष्क में उभरा। उस क्षणिक कल्पना का प्रति रूप प्रस्तुत पुस्तक है।

## एक भ्रान्ति

अग्रवाल समाज में यह एक भ्रान्ति है कि महाराजा अग्रसेन का इतिहास अप्राप्य है। यह बिल्कुल गलत है।

इसके विपरीत हम गर्व कर सकते हैं कि आदि ग्रन्थों, पुराण आदि का अवलोकन करने के पश्चात महाराजा अग्रसेन ही नहीं अपितु उनसे पूर्व वंशज जो उनसे भी हजारों वर्ष पूर्व हुए थे, उनका भी इतिहास प्राप्य है।

महाराजा अग्रसेन का काल आज से ७५०२ वर्ष पूर्व हुआ था। इस कारण इतिहास एक सूत्र में नहीं मिल पाता है। वह बुरी तरह बिखरे रूप में मिलता है।

इस पुस्तक में तमाम बिखरे अंश एकत्रित करने का प्रयत्न किया गया है। अनेक ग्रन्थों के साथ ही एक प्राचीन पुस्तक सन् १९२६ की प्रकाशित ला० रामचन्द्र गुप्ता द्वारा लिखित भी मिली। इस पुस्तक ने भी अग्रवंश के विषय में जानने में अत्यन्त सहायता की।

मैं-महाराजा अग्रसेन की पूण्य भूमि अग्रोहा भी गया जो कि वर्तमान हरियाणा में हिसार नगर से सात मील पर आज भी विशाल खण्डहर के रूप में फैली हुई है। महाराजा अग्रसेन का दूसरा पुण्यस्थल आगरा नगर है। भाग्यवश आगरा मेरी पित्र भूमि है ही।

अनेक ग्रन्थों के मंथन स्वरूप व अग्रोहा स्थल देखकर मैं आश्चर्यचकित रह गया। हृदय में अभिमान व पश्चाताप की विचित्र अनुभूति भी हुई।

अभिमान इस बात का हुआ कि मेरा जन्म अग्रवश जैसे महान कुल में हुआ है व पश्चाताप इस बात का अग्रवाल जैसे महान

दानवीर व व्यापारी जिनके कारण भारतवर्ष व विदेशों में अनेक धार्मिक व अन्य दान के कार्य हो रहे हैं, उन्हीं के वंश से सम्बन्धित अग्रोहा नगर विशाल खण्डहर के रूप में बिखरा पड़ा है।

जैन पंथ के भगवान महावीर स्वामी का ऐतिहासिक स्थल एक सुथरे रूप में हमारे सम्मुख विद्यमान है। जिसको देखकर हृदय में गर्व व श्रद्धा उत्पन्न होती है।

सिख पंथ के अनुयायी आज भी ननकाना साहब की ओर जो अब पाकिस्तान का अंग बन चुका है, प्यासे नेत्रों से निरन्तर देखते रहते हैं। उनके जत्थे के जत्थे प्रति वर्ष पाकिस्तान जाते हैं। नारे लगाते हैं, जगह-जगह लिखते हैं कि 'ननकाना आजाद ते पन्थ आजाद'। उनका ननकाना साहब के प्रति प्रेम सराहनीय है।

यहूदी समाज जेरूसलम के लिये तन-मन-धन अर्पण करने को तैयार रहते हैं। वर्तमान ईस्राइल व मिश्र युद्ध इस बात के साक्षी है। ईस्राइल के प्रश्न पर पिछले कुछ वर्षों में दो बार रक्त की नदियाँ बह चुकी हैं।

इसके विपरीत अग्रवंश की जन्मस्थली अग्रोहा आज भी भग्नावेश व जीर्ण-शीर्ण अवस्था में पड़ी कराह रही है।

आशा है अग्रवाल वंश की परम्परा के अनुयायी इस ओर ध्यान देंगे। यदि इस ओर तनिक भी ध्यान गया तो मैं अपना प्रयत्न सफल समझूंगा।

भारत की राजधानी देहली में ५-६ अप्रैल १९७५ को एक अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन का आयोजन ला० जगन्नाथ, ला० रामेश्वर नाथ गुप्ता प्रो० गुप्ता ग्रुप आफ पब्लिकेशनज ने किया है। मेरी इच्छा इस पुण्य बेला तक प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन के



आयोजन की है। मुझे नीलिमा प्रिन्टर्स के मालिक श्रीचन्द गोयल ने सात दिवस के भीतर पुस्तक छापने का भी आश्वासन दिया है।

प्रभू इच्छा सर्वोपरि है। मनुष्य मात्र तो केवल कर्म का अधिकारी है।

पुस्तक के अन्त में हमने वंश प्रकरण दिया है। वंश व्याख्या प्रथक इसलिये की है जिससे पुस्तक के अध्ययन में सरसता की कमी न हो।

—लेखक

ईस्वी सन्
३१-३-१९७५

सुरेन्द्र प्रताप गर्ग

## लेखक के पिता लाला रमेशचन्द्र अग्रवाल के

# हृदयोगार

मुझे पता चला कि मेरे ज्येष्ट पुत्र श्री सुरेन्द्र प्रताप अग्रवाल एक पुस्तक महाराजा अग्रसेन के सम्बन्ध में लिख रहे हैं।

यह एक अपार हर्ष का विषय है कि उक्त पुस्तक के माध्यम में हम अग्रवाल भाई अपने विषय में कुछ जानकारी प्राप्त कर सकेंगे। स्वयं को व अपनी वंश परम्परा को पहचान सकेंगे।

## एक तथ्य

ईश्वर की अनुकम्पा है कि महाराजा अग्रसेन के वंशजों में अनेक अग्रवाल विद्वान व धनी मानी प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं।

तमाम भारत में अग्रवंशजों द्वारा निर्माण कराई गई हजारों धर्मशालायें, अनेक मन्दिर, अनेकानेक धर्म कर्म व दान के स्थल उनकी दानवीरता का स्पष्ट प्रमाण हैं।

अग्रवाल समाज धर्म व दानवीरता में सदैव अग्रणी रहा है। व ईश्वर का यदि आशीर्वाद रहा तो भविष्य में भी रहेगा।

## अग्रोहा सम्बन्धी तथ्य

अग्रवालों के निकास के सम्बन्ध में अथवा उनसे सम्बन्धित भारत के दो नगरों का नाम विशेष उल्लेखनीय है।

(१) अग्रोहा (२) आगरा

आगरा नगर में इतनी उथल-पुथल व ऐतिहासिक उलट फेर हुई कि वहाँ अग्रवाल सम्बन्धी इतिहास अथवा सम्बन्धित स्थल नष्ट-भ्रष्ट हो चुके हैं।

अग्रोहा एक ऐसा स्थल है कि वह नष्ट होने के पश्चात पुनः जीवित न हो सका। खण्डहरों व अपार भग्नावेशों के रूप में आज भी अग्रोहा नाम अपनी पवित्रता का साक्षी है।

अग्रोहा नगर उन स्थानों की याद दिलाता है जहाँ हमारे पूर्वज वस्तुतः दैनिक कार्यक्रम करते थे अथवा बिचरते थे।

अग्रोहा नगर के खण्डहरात संजोये हुये हैं उस युग की पवित्र याद जहाँ महाराजा अग्रसेन से लेकर उनके हजारों वर्ष पश्चात तक हमारे वंशजों ने अग्रोहा नगर का मान बढ़ाया।

आज भी अग्रोहा अनेक प्राचीन बहुमूल्य धाती अपने आप में संजोये बैठा है जहां अनेक पुरातत्व सम्बन्धी प्राचीन सामग्री के चोर पहुँचते हैं और बरसात के पश्चात जो कुछ प्राचीन उपलब्धि बाहर निकलती है लेकर रफूचक्कर हो जाते हैं।

## हमारा कर्त्तव्य

क्या हम अग्रवंश के अनुयायियों का अग्रोहे के विषय में कुछ भी कर्त्तव्य नहीं है। हमारी पूर्वजों की भूमि क्या इसी प्रकार वीरान पड़ी रहेगी? क्या हम सब अग्रवाल भाई मिलकर अग्रोहे को एक अग्रवाल वंशजों के तीर्थ का रूप नहीं दे सकते हैं? क्या हम अग्रोहे का पुनः निर्माण इस रूप में नहीं करवा सकते हैं कि अग्रवाल वंशज ही क्या भारत के अन्य मतालम्बी भी वहाँ की यात्रा करने में गौरव प्रतीत करें।

## अग्रोहा सम्बन्धी निर्माण तथ्य

पुराणों के अनुसार अग्रोहे के निर्माण के समय जो भी आर्यव्रत का निवासी वहाँ आकर बसना चाहता था, उसको एक रुपया व एक ईंट अग्रोहे का प्रत्येक निवासी भेंट स्वरूप देता था।

एक रुपया व एक ईंट से ही अग्रोहे का विशाल रूप उपस्थित हो गया था।

यह थी प्राचीन बात जिसकी सत्यता के विषय में अधिक कुछ कहना व्यर्थ है। परन्तु एक तथ्य अवश्य हमारे सम्मुख खड़ा हो जाता है।

तथ्य है संगठन में शक्ति का परिचायक।

आज भी यदि अग्रवाल वंशज व अग्रवंश उपासक संगठित होकर जुट जायें तो एक क्या अनेक अग्रोहे पुर्नजीवित हो सकते हैं।

## जरा सोचिये

प्रथम मिश्र-इजराईल युद्धों की खून खराबी के पश्चात जब यहूदियों ने अपनी पित्र-भूमि जेरुसलम पर नियन्त्रण किया तो वे जेरुसलम की दिवारों से चिपट-चिपट कर रोये। सिक्ख भाई भी आज ननकाना साहब जो अब पाकिस्तान में है उसके विषय में उसी प्रकार की तड़प अपने हृदय में संजोये बैठे हैं।

अग्रोहा पहुँचने के लिए हमें विदेश यात्रा नहीं करनी पड़ती है। यह वह स्थल है जिस पर किसी अन्य व्यक्ति का कब्जा भी नहीं है।

वस्तुतः अग्रोहा नगर दोनों हाथ फैलाये व सिर झुकाये अग्रवाल भाईयों को हृदय से चिपटाने को आतुर है।

वह चीख-चीख कर हजारों वर्षों से भग्नावेश अवस्था में पड़ा अपने अनुयायियों को अपनी याद दिलाने को बेकरार है।

अतः हमें अपने पूर्वजों की पवित्र भूमि की रज अपने मस्तिष्क से लगाते हुये आज ही संकल्प लेना चाहिये कि हम अग्रवाल तन, मन, धन से एक जुट होकर अग्रोहा को पुर्नजीवित करके ही चैन की सांस लेंगे।

अग्रोहा को सुन्दर स्थल का रूप देते हुए वहाँ सुन्दर बाग, विश्वविद्यालय, विद्या मन्दिर, अतिथि भवन, वृद्ध आश्रम, औषद्यालय व गोशाला आदि अन्य सुन्दर स्थलों का निर्माण कराया जा सकता है।

हमें नहीं भूलना चाहिये कि अग्रोहा अग्रवाल वंशजों के लिये उतना ही पवित्र व तीर्थ स्थली का रूप है जितना हम सब के लिये हरिद्वार, प्रयाग, बद्रीनाथ, केदारनाथ आदि का महत्व है।

अतः आज ही हम सब एक जुट व एक मत होकर अग्रोहा के निर्माण सम्बन्धी संकल्प हृदय रत करें।

ईसवी १-४-१९७५

रमेशचन्द अग्रवाल

## अग्रवाल समाज में कुरीतियाँ

अग्रवाल समाज में अनेक कुरीतियां विद्यमान हैं। हम सब अग्रवाल भाईयों का कर्त्तव्य है कि उन कुरीतियों को अग्रवाल समाज से दूर करें।

अग्रवाल समाज के अनेक संगठन देहली में हैं। जिसके फल-स्वरूप एक अखिल भारतीय अग्रवाल सभा का आयोजन ५-६ मार्च १९७५ को श्री रामेश्वर गुप्त द्वारा भी किया गया है।

अग्रवालों का सौभाग्य है कि भारत के इतिहास में प्रथम बार इस प्रकार का एक संगठित प्रयास भारत की राजधानी दिल्ली में हो रहा है।

निम्नलिखित कुछ कुरीतियों का वर्णन है जिनको हम सब अग्रवाल भाईयों को मिलकर अपने समाज से दूर निकालना आवश्यक है।

(१) त्यौहार सम्बन्धी :—वैवाहिक देन-लेन सम्बन्धी केवल चार त्यौहारों का निणय किया जाये (१) दिवाली (२) होली (३) संक्रान्ति (४) करवा चौथ। बाकी त्यौहारों पर लड़की वालों पर से भार समाप्त किया जाना ही उचित है।

(२) दहेज का लोक दिखावा समाप्त किया जाये।

(३) रोपने अथवा सगाई के समय फल, फूल, मिठाई आदि लेकर ही लड़के वालों के यहां जाना उचित है। नकदी, स्कूटर, टेलीविजन आदि का वाह्य प्रदर्शन रुकना आवश्यक है।

(४) बारात का समय रात के स्थान पर दिन का भी किया जा सकता है। पंजाब में अग्रवाल भाईयों में दिन की शादियां आरम्भ

हो चुकी हैं। इस प्रकार अनावश्यक फिजूल खर्ची रोकी जा सकती है।

(५) बारात में नाच-कूद बन्द होना चाहिये। जिस बारात में नाच-कूद, भंगड़ा आदि हो, माननीय बराती बहिष्कार स्वरूप बरात से पृथक हो सकते हैं।

(६) बाजे कम से कम होने चाहियें। नपीरी व शहनाई हमारी प्राचीन धरोहर है उसको बढ़ावा मिलना चाहिए।

(७) विवाह सम्बन्धी निमन्त्रण पत्रों में राष्ट्र भाषा हिन्दी का प्रयोग उचित है।

(८) लेन-देन के चक्कर वश यदि कुछ सम्बन्धों में वाद-विवाद पड़ता दिखाई पडे तो पंचायत के सम्मुख वे मामले आने चाहिये, जिसका निर्णय अत्यन्त सौहार्दयपूर्ण वातावरण में दोनों दलों को समझा बुझाकर पंच निर्णय करें।

(८) विवाह संस्कार विद्वान पण्डित द्वारा ही कराना आवश्यक है। पण्डित वेद मन्त्रों के शुद्ध उच्चारण के साथ प्रत्येक मन्त्र का अर्थ भी जानते हों। यह परम आवश्यक है।



"अग्रसेन-चरित्र"
(संक्षिप्त परिचय)

महाराज अग्रसेन का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है। अग्रवाल समाज को अभिमान है कि उनके वंश के प्रवर्तक एक महान चक्रवर्ती सम्राट थे। उन्होंने ६० वर्ष तक निरन्तर राज्य किया और अग्रवाल समाज को एक विशाल स्वरूप दिया। जिनका नाम आज भी प्रत्येक अग्रवाल वंशज अभिमान के साथ लेता है और सदैव लेता रहेगा।

महाराज अग्रसेन का काल महाभारत युग से हजारों वर्ष पूर्व रहा है। महाराज अग्रसेन का वर्णन प्राचीन ग्रन्थों में बिखरे रूप में मिलता है।

महाराज अग्रसेन का समय इतना प्राचीन रहा है कि यदि हम एक विशेष ग्रन्थ का अवलोकन करके उनके विषय में पूर्ण इतिहास जानना चाहें तो असम्भव ही होगा।

अनेक प्राचीन ग्रन्थ, अग्रपुराण, कन्स युद्ध व अन्य ग्रन्थों का मंथन, करने से महाराज अग्रसेन का इतिहास उभर कर आता है और प्रत्येक अग्रवाल वंशज अपना सिर गर्व के साथ उठा कर कह सकता है कि वे एक अमूल्य धाती के अधिकारी हैं। विरासत के रूप में वह एक महान प्रतापी महाराजा के वंशज है जिन्होंने १०० वर्ष की आयु पाई व ६० वर्ष तक भारत के एक विस्तृत भूखण्ड पर राज्य किया।

## आर्य सम्वत

महाराज अग्रसेन के जन्म अथवा जीवन काल जानने के लिए आर्य सम्वत को जानना आवश्यक है।

महाराज अग्रसेन का युग महाभारत से हजारों वर्ष पूर्व रहा है। ईसवी सन् अथवा देशी सम्वत का प्रचलन तो महाभारत के हजारों वर्ष पश्चात् हुआ है। आर्य सम्वत सृष्टि की उत्पत्ति के साथ रहा है।

सृष्टि सम्वत की व्याख्या एक कठिन गणित का प्रश्न है। संक्षेप में हम कह सकते हैं की ईसवी सन् १९७५ अथवा विक्रमी सम्वत २०३५, सृष्टि सम्वत १,९७,३९,४९,०७४ (एक अरब सतानवे करोड़, उन्नतीस लाख, उन्नचास हजार, चोहत्तर के रूपानान्तर है।

स्पष्ट है पृथ्वी को उत्पन्न हुये १,९७,२९,४९,०७४ वर्ष हो चुके हैं।

महाभारत सृष्टि सम्वत १,९७,२९,४४,०२५ में हुआ था। अथवा महाभारत को हुये ५०४९ वर्ष हो चुके हैं।

महाराज अग्रसेन का जन्म १,९७,२९,४१,५७२ सृष्टि सम्वत में हुआ था अथवा महाभारत से २४५३ वर्ष पूर्व हुआ था। इस प्रकार महाराजा अग्रसेन ने ७५०२ वर्ष पूर्व इस संसार में जन्म लिया था। उनका ३९ वर्ष की अवस्था में राजतिलक हुआ और पूरे सौ वर्ष इस संसार में आर्य्यवर्त रूपी आकाश के जाज्वल्यमान सितारे के रूप में जीवन व्यतीत किया। इस प्रकार ६१ वर्ष तक एक सफल महाराजा के रूप में आर्य्य व्रत पर राज्य किया।

## इतिहास सम्बन्धी भ्रान्ति

अग्रवाल समाज में एक भ्रान्ति है कि महाराजा अग्रसेन का इतिहास उपलब्ध नहीं है। यह एक हमारी मानसिक दुर्बलता का



प्रतीक है।

अग्रवाल वंशजों को तो अभिमान होना चाहिए कि वे एक प्राचीनतम परम्परा व उत्तराधिकार के साथ इस संसार में उत्पन्न हुये हैं।

हम दावे के साथ कह सकते हैं कि भारत में सम्भवतः अग्रवाल समाज सबसे प्राचीनतम समाज है। उनका इतिहास कम से कम ७५०० वर्ष पुराना है।

७५०० वर्ष का समय एक साधारण बात नहीं है। यह भारत का वह प्राचीनतम समाज है जिनके पूर्वजों ने भगवान कृष्ण से भी पूर्व काल, अपनी आंखों से देखा, और अपनी धमनियों में रक्त की पवित्रता आज तक सजोये हुये हैं।

हिन्दू धर्म के आदि ग्रन्थों के पठन व अध्ययन के पश्चात तथा उनके मन्थन के प्रतिरूप अकथनीय सत्य उभरने लगते हैं। महाराजा अग्रसेन का ही नहीं अपितु उनके पूर्वजों तक का इतिहास स्पष्ट सम्मुख आने लगता है।

## महाराजा अग्रसेन के पूर्वज

अग्रवाल समाज को अपने पूर्वजों की पूर्ण जानकारी देने के लिए हम महाराजा अग्रसेन से पूर्व के इतिहास पर भी एक दृष्टि डालना चाहते हैं।

महाराजा अग्रसेन के पूर्व काल का इतिहास असाधारण रूप से विस्तृत रूप में मिलता है। यह इतिहास सैकड़ों ही नहीं अपितु हजारों वर्षों में फैला हुआ है।

आधुनिक युग में तो अनेकानेक तरीका ऐतिहासिक धाती को

सुरक्षित रखने के हैं। प्राचीन युग की भाषा भी आज की देवनागरी से भिन्न थी और लिखने का माध्यम भोजपत्र आदि था। अतएव वंशजों के नाम की सत्यता तो शत प्रतिशत ठीक है परन्तु काल में असाधारण अन्तर हो सकता है।

हम पाठकों के सम्मुख उस युग का वर्तान्त रखने का प्रयत्न कर रहे हैं जिस युग का वर्णन संसार के किसी भी इतिहास में मिलना असम्भव है।

यह वह काल है जिस काल के विषय में हम कह सकते हैं कि वह भारत का स्वर्ण युग था। उस समय का उन्नतिशील भारत विश्व के अनेकानेक देशों की तुलना में अग्रणीय था।

विश्व के तमाम देश भारत के मुकाबले कहीं अधिक पिछड़े हुए थे। भारत उन्नति के चरम शिखर पर था। विश्व का मार्ग दर्शक था।

हमें अभिमान है कि भारत के प्राचीनतम वेद, पुराण आदि ग्रन्थों को उलटने से भारत के इतिहास की एक प्राचीन झाँकी मिल जाती है।

हमारे इतिहास का प्रारम्भ महाभारत काल से हजारों वर्ष पूर्व से होता है। सर्वप्रथम महाराजा साम्भूमन का उल्लेख मिलता है।

महाराजा साम्भूमन एक अत्यन्त विद्वान, दक्ष तथा शक्तिशाली व्यक्ति थे। मध्य देश तथा ब्रह्म देश के निवासियों ने परस्पर विचार विमर्श तथा खूब सोच विचार करके साम्भूमन को अपना राजा बनाया।

महाराजा साम्भूमन ने राजतिलक के उपरान्त आर्य्यव्रत के



शासन की बागडोर अपने हाथ में सम्हाल ली थी।

उस युग के भारत को आर्य्यव्रत कहना ही उचित होगा, क्योंकि भरत जिसके नाम पर आर्य्यव्रत का नाम भारत विख्यात हुआ, साम्भूमन के हजारों वर्ष पश्चात इस संसार में भूपति के रूप में उत्पन्न हुये थे।

साम्भूमन एक कुशल राजनीतिज्ञ व शक्तिशाली राजा सिद्ध हुआ। उसने देश की राजधानी बिठोर बनाई। बिठोर कानपुर के निकट एक स्थान था।

साम्भूमन ने अत्यन्त कुशलता व नीतिपूर्वक राज्य किया। बाहुबल व योग्यता से राज्य को उन्नति की ओर अग्रसर किया। विद्या का देश में प्रचार किया व जनता को समृद्धिशील बनाया।

साम्भूमन के दो पुत्र हुए प्रियव्रत व ओतानपाद। महाराजा साम्भूमन का छोटा पुत्र ओतानपाद अपने पिता की राजधानी बिठोर का महाराजा बना।

प्रियव्रत ने अपनी नवीन राजधानी जम्बुनगर की स्थापना की।

प्रियव्रत एक नीति कुशल राजा था। विद्वानों का महान प्रेमी था। उसके दरबार में अनेक विद्वानों का समूह सदैव उपस्थित रहता था, जिनकी सलाह से वह नीतिपूर्वक राज्य कार्य करता था।

प्रियव्रत अधिक सफल राजा रहा।

## राजा अग्निधर

अनेक वर्षों के पश्चात, प्रियव्रत के वंश में एक महान प्रतापी महाराजा का जन्म हुआ। इतिहास में उस महान व्यक्ति का उल्लेख राजा अग्निधर के नाम से मिलता है।

राजा अग्निधर ने जम्बू द्वीप के शासन का अत्यन्त सफलता सहित विस्तार किया।

अग्निधर के नौ पुत्र उत्पन्न हुए। उसने अपने जीवन काल में अपने राज्य जम्बूद्वीप के नौ खण्ड किये और उन खण्डों का उचित प्रकार विभाजन करके प्रत्येक पुत्र को उसकी बागडोर सौंप दी।

प्राचीन ग्रन्थों में प्रत्येक खण्ड का विधिवत नाम व अग्निधर के पुत्रों के नामों का उल्लेख मिलता है। प्रसंगहीन होने के कारण उनकी व्याख्या इस स्थान पर हम नहीं कर रहे हैं। पुस्तक के अन्त में सातों द्वीपों और पुत्रों के नाम व्याख्या सहित दिये गये हैं।

## महाराजा भरत

अग्निधर की ग्यारहवीं पीढ़ी में महाराजा भरत का उद्भव हुआ। महाजाजा भरत के नाम पर प्रत्येक भारतवासी आज भी अभिमान करता है।

महाराजा भरत बचपन में ही शेरों से खेले थे। उनके काल में राज्य की सीमा के उल्लेख के बीच सिंमलद्वीप, मालद्वीप, पूरन-वसर (लंकाद्वीप), अतरतन अर्थात अण्डमन, नेकोवार के टापूओं की व्याख्या भी मिलती है।

महाराजा भरत के समान भूमण्डल पर सम्भवतः आज तक महान वीर, विद्वान व सच्चा महान व्यक्ति उत्पन्न नहीं हुआ होगा।

महाराजा भरत का यश चहूं दिशाओं में फैला हुआ था। उनकी कीर्ति सुनकर दूसरे देशों से राजनैतिज्ञ व विद्वान उनके राज्य दरवार में आकर गर्व प्रतीत करते थे। वह दान वीर भी उत्तम कोटि के थे।



उनके यश के अतिरूप उनके पश्चात आर्य्यव्रत का नाम भारत खण्ड हो गया।

## ओतानपाद वंश

आदि ग्रन्थों में प्रियव्रत वंश के सम-कालीन ओतानपाद वंश का वर्णन भी मिलता है।

अग्निधर वंश में एक महाराजा उत्पन्न हुए थे ओनी। महाराजा ओनी का स्थान दसवें वंशज के रूप में आता है। उसी युग में एक राज्य वंश था 'ओतानपाद वंश'। ओतानपाद वंश का समकालीन राजा था वछ। राजा वछ ओतानपाद वंश का १४ वाँ वंशज था।

'ओतानपाद वंश के राजा वछ और राजा अग्निधर के वंशज ओनी के बीच भयानक कटुता हो गई।

उस कटुता के प्रतिरूप एक घमासान युद्ध राजा वछ व राजा ओनी के बीच हुआ।

महाराजा ओनी युद्ध में हताहत रहा और वह अपने पीछे केवल एक आठ वर्षीय बालक छोड़ कर काल का ग्रास बन गया।

राजा वछ भी युद्ध के परिणामों से वंचित न रह सका। उसकी शक्ति क्षीण हो चुकी थी।

## राजा वछ का अन्त

राजा वछ के समकालीन राज्य विश्व वंश के नाम से विख्यात था।

विश्व वंश का उस काल में राजा था ग्रीव।

राजा ग्रीव ने उचित अवसर देखा और उस स्वर्णीय अवसर

का लाभ उठाया।

राजा ग्रीव ने ओतानपाद वंश के राजा वछ पर आक्रमण कर दिया। इस युद्ध के परिणामस्वरूप राजा वछ की हार हुई और राजा ग्रीव उस राज्य का स्वामी बन बैठा।

राजा वछ के केवल एक कन्या ही थी। उसकी मृत्यु के पश्चात किसी प्रकार कन्या बच निकली और जंगलों में ऋषियों के आश्रमों में शरण प्राप्त करली।

प्रियव्रत और ओतानपाद वंशों की शक्ति क्षीण होने के अनेक बुरे परिणाम निकले।

इन परिणामों के फलस्वरूप हृण्यकश्यप का जन्म हुआ।

## हृण्यकश्यप व प्रल्लाद

राजा वछ की शक्ति घट चुकी थी। ग्रीव नामी-विश्व वंश से सम्बन्धित व्यक्ति ने राजा वछ पर आक्रमण कर दिया।

राजा वछ महाराजा ओनी से युद्ध के परिणाम स्वरूप अत्यन्त क्षीण हो चुका था।

ग्रीव ने राजा वध का वछ कर दिया और स्वयं राजा बन बैठा। राजा वछ की एकमात्र पुत्री जान बचा कर भाग निकली।

ग्रीव ने अधिक समय राज्य नहीं किया। वह शीघ्र ही परलोक सिधार गया।

ग्रीव के वंश में ही हृण्यकश्यप निर्दयी राजा हुआ। उसने अपने बाहुबल से अनेक प्रदेश जीते। राज्य की सीमा बढाई।

राज्य विस्तार व विजय ने हृण्यकश्यप को राज्य के मदान्ध से चूर कर दिया। वह समझ बैठा की मैं ईश्वर से कम



नहीं हूं।

उसने राज्य के अन्दर घोषणा कर दी कि मेरे नाम के सिवाय किसी दूसरे परमात्मा की पूजा न की जाये। मैं ही परमात्मा का रूप हूं। अन्य किसी ईश्वर का संसार में अस्तित्व नहीं है। मैं ही संसार का स्वामी हूं। ईश्वर का रूप हूँ। अतएव मेरी ही पूजा की जाये।

राजा हृण्यकश्यप के नवीन आदेश के अनुसार इस आज्ञा की अवहेलना करने वाला मृत्यु दण्ड का अधिकारी था।

## प्रल्लाद भक्त

उसी नास्तिक के यहां प्रल्लाद भक्त उत्पन्न हुआ। प्रल्लाद भक्त का नाम आदि ग्रन्थों में महर्षि प्रल्लाद के नाम से उल्लेखनीय है।

महर्षि प्रल्लाद ने अपने पिता की बुद्धि ठीक करने का प्रण किया।

हृण्यकश्यप ने अपने पुत्र को ही अपने रास्ते से हटाने का लाख प्रयत्न किया।

अपने बेटे प्रल्लाद को पर्वत से गिरवाया, नदी में फैंका, उन्मुक्त हाथी के सम्मुख डाल दिया, जीवित अग्नि में भष्म कराने का यत्न किया, गर्म खम्बे में बंधवाया और हार कर जीवित अग्नि में जलवाने का यत्न किया।

पापी हृण्यकश्यप के राज्य में असन्तोष की भावना व्याप्त हो चुकी थी।

## हृण्यकश्यप वध व दो कथायें

हृण्यकश्य वछ के सम्बन्धित हो तथ्य उभर कर सम्मुख आते

हैं। एक तथ्य को पौराणिक की संज्ञा दे सकते हैं तथा दूसरे को वास्तविक।

दोनों तथ्य इस प्रकार हैं—

एक तथ्य के अनुसार हृण्यकश्यप का बध स्वयं नरसिंह भगवान ने शेर का रूप धारण करके किया और संसार को ईश्वर में विश्वास की प्रेरणा दी।

दूसरे तथ्य के अनुसार जिस समय हृण्यकश्यप ने महर्षि प्रह्लाद की हत्या की योजना बनाई, उसके एक मन्त्री जिसका नाम नरसिंह था, उसके हृदय में हृण्यकश्यप के अत्याचारों के विरोध स्वरूप भयानक अग्नि धधकने लगी। उसने हृण्यकश्यप के वध की सफल योजना बनाई।

सत्य कोई भी तथ्य हो परन्तु हृण्यकश्यप को अपने जुल्मों को दण्ड सहना पड़ा। वह मृत्यु को प्राप्त हुआ।

भक्त प्रह्लाद तो ऋषी तुल्य था। उन्हें राज्य से क्या लेना देना था पिता की मृत्यु के पश्चात वह जंगलों में तपस्या हेतु प्रस्थान कर गये।

## राजा वछ व ओनी के वंशज

हृण्यकश्यप के पश्चात राज्य के दो भाग हो गये। एक भाग महाराजा चन्द्र को मिला व दूसरा राजा सूर्य को। राजा चन्द्र, राजा वछ की कन्या का वंशज था और सूर्य राजा ओनी के वंश से सम्बन्धित था।

राजा चन्द्र ने अपनी राजधानी जम्बू बनाई और राजा सूर्य ने बिठोर को राजधानी बनाया।



महाराजा अग्रसेन के पूर्वज सूर्य वंशी थे। महाराजा ओनी व भरत इसी वंश से सम्बन्धित थे।

सूर्य वंश में अनेक प्रसिद्ध राजा हुये। यह वंश खूब फला फूला।

अनेक राजाओं के बीच २२ महाराजाओं के नाम आदि ग्रंथों में स्पष्ट उल्लेखनीय है।

इन प्रसिद्ध राजाओं में अन्तिम महाराजा हुए हैं मानधाता।

मानधाता का विवाह उस युग के प्रसिद्ध प्रतापी व महाबली महाराज शिशुबिन्दु की पुत्री इन्दुवन्ति से हुआ था।

महाराजा मानधात भी अत्यन्त पराक्रमी राजा सिद्ध हुआ। मानधाता उस युग का अत्यन्त विद्वान और नीति कुशल राजनीतिज्ञ महाराजा प्रसिद्ध हुआ।

मानधाता के तीन पुत्र हुए। परीक्ष, मचकन्द, अम्बरीष। मानधाता का द्वितीय पुत्र मचकन्द सन्तानहीन था।

## परीक्ष कुल

सूर्य वंश के राजा परीक्ष ने अपनी राजधानी अयोध्या निश्चित की। भागवत पुराण में राजा परीक्ष को राजा परोसक भी कहा गया है।

राजा परीक्ष के वंशज ही रघुपति सूर्य वंशी महाराजा परुषोत्तम राम हुए।

## अम्बरीष कुल

सूर्य वंशी महाराजा मान्धाता के तृतीय पुत्र अम्बरीष ही अग्रवंश के आदि स्रोत थे।

राजा अम्बरीष के वंश में ४२ वीं पीढ़ी के पश्चात महाराजा अग्रसेन का जन्म हुआ था। इस प्रकार सूर्य वशी अम्बरीष कुल की देन ही अग्रवाल वंश के प्रवर्तक महाराजा अग्रसेन माने गये हैं।

महाराजा मानधाता के तृतीय पुत्र ने अपने राज्य का विस्तार दक्षिण में चन्द्रावती की ओर किया।

उस युग का चन्द्रावती आधुनिक युग का अमरावती का प्रायवाची है।

## महाराजा अम्बरीष वंश व्लाख्या

महाराजा अम्बरीष का झुकाव ईश्वर की ओर अधिक था। उन्होंने अपने जीवन काल में अधिकतर राज्य शांतिपूर्वक किया। वे जीवन काल में ही अपने पुत्र प्रकाश को राज्य सौंप कर स्वयं तपस्या करने जंगलों में चल दिए।

राजा प्रकाश के वंशजों ने अनेक वर्षों तक निरन्तर राज्य किया।

आदि ग्रन्थों में राजा प्रकाश के २२ वंशज राजाओं का नाम उल्लेखनीय है।

इसी वंश के ग्यारहवें राजा मैन थे। यह राजा अत्यन्त शूर-वीर व प्रतापी थे। उन्होंने सप्तद्वीप जीते। अपने राज्य की सीमा अत्यन्त विशाल व विस्तृत कर दी।

राजा मैन ने अपना विवाह सप्तद्वीप के राजा की कन्या सतवन्ती से किया और अपने राज्य की जड़ें मतबूत की।

राजा प्रकाश के वंशजों में बाईसवें महाराजा श्याम हुए थे।



महाराजा श्याम अत्यन्त धर्मात्मा व दयालु प्रवर्त्ति के थे। वह धर्मवीर, विद्वान व वीर योद्धा थे।

उनके जीवन काल का एक वर्तान्त आदि ग्रन्थों में मिलता है।

## महाराजा श्याम

महाराजा श्याम एक बार जंगलों में शिकार हेतु गये। वहां उनकी दृष्टि एक जंगली भैंसें पर पड़ी।

उन्होंने सोचा यह भैंसा न जाने कितने निरीह पशुओं को तंग करता होगा। क्यों न इन अन्जान दुर्बल पशुओं की रक्षा की जाये।

यह सोचते ही उन्होंने तीर से निशाना लगाया। बाण सीधा भैंसे में लगा और देखते ही देखते भैंसा जमीन पर पछाड़ खाकर गिर पड़ा।

गिरते समय महाराजा ने देखा कि एक खरा भैंसे के नीचे दब गया। महाराजा आश्चर्य चकित रह गये। साथ ही मन ही मन पश्चाताप करने लगे कि निरर्थक ही दो प्राणियों की जान ले ली।

कुछ ही क्षण में पश्चाताप व हृदय ग्लानि की सीमा इतनी बढ़ गई कि उन्होंने तुरन्त घोषणा की कि एकदम भैंसे के नीचे से खरा निकालो।

उन्होंने यह भी प्रण किया कि यदि खरा जीवित नहीं निकला तो मैं पश्चाताप के रूप में तुरन्त प्राण त्याग दूंगा।

ब्राह्मणों ने राजा को विश्वास दिलाया कि आपने कोई कार्य बुरे हृदय से नहीं किया है। खरा अवश्य जीवित निकलेगा।

भैंसे की लाश उठवाई गई। सब हैरान रह गये, देखते ही देखते खरा ने एक छलांग लगाई और कूदता फांदता भाग गया।

महाराजा की प्रसन्नता अनन्तहीन हो गई उन्होंने उसी स्थान पर एक नगर स्थापित करने की घोषणा की।

नवनिर्मित नगर का नाम अरण रखा गया। अरण आज भी आबू जिले के अन्तर्गत एक सुन्दर ग्राम है।

## वंशावली महाराजा श्याम

महाराजा श्याम के वंशजों में सात उत्तराधिकारियों के नाम उल्लेखनीय मिलते हैं।

सातवें वंशज थे राजा गजराज सिंह। राजा गजराज सिंह का राज्याभिषेक उनके पिता महाराजा चूड़ामणि के स्वर्गोपरान्त हुआ।

महाराजा गजराज सिंह अत्यन्त विद्वान व्यक्ति थे। उनके जीवन काल में सुख शान्ति का साम्राज्य रहा। उन्होंने पजाब में कई नगरों का निर्माण करवाया।

## वंशावली महाराजा गजराज

महाराजा गजराज के वंश में अनेक प्रतापी व बलशाली राजा हुये।

उनके वंश में ग्यारह महान राजाओं का उल्लेख आदि ग्रन्थों में मिलता है।

ग्यारहवें महाराजा महीधर का नाम विशेष उल्लेखनीय है।

## महाराजा महीधर

महाराजा महीधर अपने युग के प्रतापी, विद्वान, योग्य व



बलशाली राजा हुये थे।

उनके जीवन की एक घटना विशेष उल्लेखनीय है।

एक दिवस महाराजा महीधर की शानदार सवारी नगर से निकल रही थी।

सवारी के बीच महाराज की निगाह एक स्नान करती युवती पर पड़ी।

युवती एक ब्राह्मण कन्या थी। महाराज ने हृदय में विचार आया कि इस प्रकार किसी युवती को देखना पाप है और महाराज के लिए महापाप है।

महाराजा ने युवती व उसके पिता से, इस अनजाने अपराध की क्षमा याचना की।

महाराजा ने कहा कि हे युवती तू मेरी धर्म पुत्री है और पिता के लिए पुत्री पर ऐसी कुदृष्टि एक महान पाप है।

उपरोक्त घटना से महाराजा महीधर की धर्मपरायणता का पता चलता है।

आज हमारे नेता अथवा प्रजा में ऐसे विचारों का सर्वथा अभाव है। आज तो विषय भोग का बोलवाला हो रहा है।

हमारे नेता विषय भोग व मदमस्ती में सर्वोपरि हैं। इस घटना से हम तथा वे सब एक आदर्श सीख सकते हैं।

महाराजा महीधर के सात पुत्र थे। सातो पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र ही अग्रवाल वंश के प्रेरणास्रोत, अग्र वंश के पूर्वज व नायक महाराजा अग्रसेन का संसार में उद्भव हुआ।

महाराजा महीधर के सातों पुत्रों के नाम क्रमशः निम्न हैं :

## महाराजा महीधर के वंश की व्याख्या

(१) अग्रसेन, (२) मनुष्वज, (३) हेमलू, (४) मुकन्दी, (५) तिलाधर, (६) सुरयाल, (७) सिद्धिसेन।

## अग्रसेन का वंश परिचय

उपरोक्त वंश परिचय महाराज अग्रसेन के पूर्वजों का है। महाराज अग्रसेन का जन्म आज से ७५०२ वर्ष पूर्व हुआ था।

वंश का परिचय देने में हमारा एक विशेष तात्पर्य और भी है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट सिद्ध होता है कि अग्रवाल समाज ईश्वर की विशेष धरोहर है।

अग्रवाल समाज महाराजा भरत व सूर्यवंशी मर्यादा पुरुषोत्तम राम के वंशजों से सम्बन्धित है।

महाराजा अग्रसेन तथा भगवान राम दोनों ही सूर्यवंशी महाराजा मानधाता के वंश से सम्बन्धित थे। यह स्पष्ट हो चुका है। इस प्रकार हम अग्रवालों को गर्व है कि हमारी धमनियों में विश्व के महानतम महापुरुष, महाराजा भरत, महाराजा पुरुषोत्तम राम तथा महाराजा अग्रसेन जैसे व्यक्तियों का रक्त प्रवाहित है।

अग्रवाल एक साधारण समाज नहीं है। इनके पूर्वजों में इने-गिने वीर, विद्वान, तेजस्वी, प्रभुभक्त, दानवीर व दयालु महारथी उत्पन्न हुये हैं।

अग्रवाल वंशजों के प्रेरणास्रोत वह अपूर्व महान तेजस्वी आत्मा रहीं हैं जिन पर प्रत्येक भारतवासी आज भी गर्व से सीना उठाकर चलता है।

आज प्रत्येक भारतवासी भगवान राम के कर्तव्य की सराहना



करता है, पूजा करता है। उनके महान त्याग की अकथनीय प्रशसा करता है।

ऐसे तेजस्वी थे राम जिन्होंने पिता के प्रण के लिए राज्य त्याग दिया। प्रजा के हित के लिये अपनी प्राणप्रिय अर्धांगिनी को भी भुला दिया।

ऐसे महान व्यक्ति जिन्होंने दुष्टों के दमन के लिए लंकापति रावण का संहार भी करने में पीछे कदम नहीं हटाया।

हम उस भरत की सन्तान हैं जो बचपन में शेरों से खेला था। जो निडर व साहसी था।

हमें अपने पूर्वजों के कारनामों से शिक्षा लेनी चाहिए। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारी नसों में अनेक बलवान वंशजों का रक्त प्रवाहित है।

हमारे वंशज ऐसे महान व्यक्ति थे जो निरीह खरा के मरने के डर से स्वयं का प्राणान्त करने से नहीं चूकते थे। वे इतने महान थे कि प्रजा की इज्जत को अपनी पुत्री की अस्मत से अधिक महत्वपूर्ण समझते थे।

## महाराजा अग्रसेन जीवन चरित्र

महाराज अग्रसेन अपने पिता महाराजा महीधर के ज्येष्ठ पुत्र थे।

इनका जन्म आर्य्य सम्वत १९७२९४१५७२ एक अरब सतानवें करोड़ उन्नतीस लाख इकतालिस हजार पांचसौ बहत्तर में हुआ था। यह काल ईस्वी सन् १९७५ के अनुसार ७५०२ वर्ष पूर्व हुआ था।

इस प्रकार महाराज अग्रसेन का जीवन काल महाभारत के युग से २४५३ वर्ष पूर्व का समय रहा है।

जैसा हमने पूर्व कहा था इस काल का विधिवत इतिहास दिनांकानुसार तो मिलना कठिन है, परन्तु यदि तमाम इतिहास को एक सूत्र में बांध कर अवलोकन करें तो महाराज अग्रसेन के सम्बन्ध में अनेकानेक तथ्य उभर कर आते प्रतीत होते हैं।

महाराजा अग्रसेन की माता जी का नाम महारानी भेंदकवर था। इनकी माता जी तत्कालीन मंदसोर के राजा की पुत्री थी।

महाराजा महीधर के आप सबसे बड़े पुत्र थे। प्रथम पुत्र के उत्पन्न होने पर प्रसन्नता स्वाभाविक होती ही है। इसके विपरीत महाराजा अग्रसेन तो महाराजा महीधर के शासन के उत्तराधिकारी के रूप में संसार में आये थे।

पुत्र उत्पन्न के अपार हर्ष के द्योतक के रूप में उन्होंने अग्राहा नगर की स्थापना यमुना नदी के तट पर की। अग्राहा नगर का अपभ्रंश रूप आगरा नगर बन गया। आज वही स्थान आगरा के नाम से विश्वविख्यान है।

युवराज के रूप में अग्रसेन एक होनहार मेधावी बालक थे। बालकाल में ही इन्होंने अशस्त्र शस्त्र विद्या, राजनीति विद्या का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया था। इनकी शूर-वीरता से स्पष्ट दिखाई पड़ता था कि महाराजा अग्रसेन का भविष्य उज्ज्वल व शानदार था।

इनके प्रथम विवाह के विषय में आदि ग्रन्थों में उल्लेख मिलता है। इस उल्लेख के अनुसार इनका प्रथम विवाह राजा सुन्दरसेन की गुण सम्पन्न युवरानो सुन्दरवती नामक कन्या से



हुआ था।

राजा सुन्दरसेन का राज्य विस्तोर नदी के तट पर केतु नामक नगरी पर था।

आदि ग्रन्थों के अनुसार जिस समय युवराज अग्रसेन की आयु केवल १२ वर्ष की थी वह देशाटन को निकले। महाराजाधिराज महिधर ने सहर्ष देशाटन व तीर्थों की यात्रा करने की आज्ञा दे दी।

यात्रा के दौरान इनके साथ एक सेना की टुकड़ी भी थी।

देशाटन व तीर्थ यात्रा के बीच यात्री-दल केतू नगरी पहुंचा।

केतू नगरी, विस्तोर नदी के तट पर बसी हुई अत्यन्त सुन्दर स्थान था। यात्रा का यह अन्तिम भाग (दौर) था।

यहाँ राजा सुन्दरसेन ने युवराज अग्रसेन का हार्दिक स्वागत किया। कुंवर अग्रसेन की भव्य मूर्ति देखकर वह लोभ संवरण न कर सके।

कुंवर अग्रसेन सर्वगुण सम्पन्न किशोर थे। महाराजा महीधर के सबसे ज्येष्ठ पुत्र होना सोने पर सुहागा था।

इस प्रकार महाराज अग्रसेन का प्रथम विवाह सुन्दरसेन की कन्या सुन्दरवती से सम्पन्न हुआ।

## ऐतिहासिक तथ्य

आदि ग्रन्थों के अनुसार कुंवर अग्रसेन व उनके श्वसुर सुन्दरसेन ने महाराजा महीधर की बिना आज्ञा के तुरन्त विवाह कर दिया।

विवाह के समय अपार दहेज, धन सामग्री, सम्पत्ति आदि भेंट की।

विवाह के समय कुंवर अग्रसेन की आयु १२-१३ वर्ष ही रही होगी। विवाह के पश्चात रानी को साथ लेकर कुंवर अग्रसेन अपने श्री पिता महाराजा धिराज के श्री चरणों में उपस्थित हुए और आशीर्वाद लिया।

## हमारा विचार

हम पूव ही कह चुके हैं कि अग्रवंश का इतिहास इतना पु ाना है कि कुछ वर्षों का अन्तर पड़ सकता है।

आयु के विषय में हम अधिक कुछ कहना नहीं चाहेंगे क्योंकि ५-७ वर्ष का अन्तर इतने प्राचीन इतिहास में साधारण बात है। आयु २० वर्ष की भी हो सकती है।

हम केवल इतना ही कह सकते हैं कि हो सकता है कि समय के अनुसार साधारण उलट-फेर हो गया हो। हमारे विचार में विवाह महाराजा महीधर की स्वीकृति के पश्चात ही हुआ होगा। यह तर्कसंगत प्रतीत नहीं होता कि देशाटन के बीच ही कुंवर अग्रसेन के श्वसुर ने अपनी पुत्री का विवाह उनसे कर दिया हो और अपनी पुत्री की विदा भी कर दी हो।

अग्रवंश का इतिहास वास्तव में इतना प्राचीन है कि इस विषय में अधिक कुछ कहना उचित नहीं है। हमें तथ्यों की उपलब्धि पर ही गर्व होता है।

प्रथम विवाह के पश्चात कुंवर अग्रसेन अपनी धर्मपत्नी सुन्दर वती के साथ आनन्द पूर्वक रहने लगे।



## द्वितीय विवाह

कुंवर अग्रसेन का द्वितीय विवाह चम्पावती के राजा धनपाल की कन्या सुन्दरी धनपाला से हुआ।

धनपाला भी एक अत्यन्त योग्य व चतुर बाला थी।

महाराजा महीधर राज्य कार्य में चतुरता पूर्ण संलग्न थे। चारों ओर आनन्द वृष्टि हो रही थी कि यकायक महाराज महीधर का स्वर्गवास हो गया।

पिता के स्वर्गवास के समय कुंवर अग्रसेन की आयु केवल ३९ वर्ष की थी। ज्येष्ठ पुत्र के नाते उन्होंने राज्य कार्य सम्हाला और पिता के सिंहासन के उत्तराधिकारी बने।

## महाराज अग्रसेन का शासन काल

महाराजा अग्रसेन ने आगरे को अपनी राजधानी निश्चित किया। हमारे विचार में आगरे को राजधानी निश्चित करना समयानुकूल भी था।

महाराजा अग्रसेन के पिता महीधर एक प्रतापी राजा थे उन्होंने अपने राज्य काल में अपने राज्य का यथेष्ठ विस्तार किया था। आगरा मध्य स्थित स्थान है।

महाराजा अग्रसेन का आगरा को राजधानी के रूप में प्रयोग करना उनकी राजनैतिक दूरदर्शिता का प्रमाण है।

महाराज अग्रसेन के हजारों वर्ष पश्चात मुगलकालीन युग में भी आगरा ही राजधानी के रूप में उपयुक्त स्थान मुगल बादशाहों को प्रतीत हुआ था।

बादशाह अकबर ने तो आगरा के पास फतहपुर सीकरी की स्थापना विशेष रूप से की थी। मुगल बादशाह जहांगीर, शाहजहाँ आदि की गतिविधि का विशेष स्थल आगरा था। आगरे का ताजमहल इस बात का स्पष्ट सबूत है।

महाराजा अग्रसेन के शासन में प्रत्येक विद्या योवन पर थी। अनेक गुरुकुल खुले हुए थे जिसमें विद्या अध्ययन के साथ चरित्र निर्माण का भी विशेष ध्यान रखा जाता था।

महाराज अग्रसेन ने वैदिक धर्म का यथेष्ठ प्रचार किया। अनेक राजा-महाराजाओं से एकता के सम्बन्ध दृढ़ किये।

अनेक युद्ध जीते व अपने राज्य का यथेष्ट विस्तार किया।

आपके दोनों रानियों से १८ पुत्र हुए। सब पुत्र यथेष्ट बलशाली, योद्धा, वीर तथा विद्वान थे।

अपने शासन काल में महाराजा अग्रसेन ने अग्रोहा नगर की स्थापना भी की। अग्रोहा नगर अत्यन्त सुन्दर व आधुनिक साधनों से परिपूर्ण बसाया गया था।

महाराज अग्रसेन की राजधानी आगरा थी। उनका राज्य का विस्तार अत्यन्त विस्तृत हो चुका था। महाराज अग्रसेन की इच्छा थी कि राज्य का ठोस व सुविधाजनक संचालन के लिए विस्तृत व्यवस्था आवश्यक है।

एक बार राज्य भ्रमण के बीच महाराजा अग्रसेन लोहागढ़ से वापिस राजधानी की ओर लौट रहे थे।

यात्रा के बीच वे एक जंगल से निकले। जंगल की भव्यता व सुन्दरता से वह मोहित हो गये।

एक रात उन्होंने उसी स्थान पर विश्राम करने का निश्चय



किया। विश्राम के बीच उन्होंने प्रतीत किया कि प्राकृतिक दृष्टि कोण से वह स्थान सर्वगुण सम्पन्न है।

गर्मी के मौसम में ठण्डी-ठण्डी हवा के झोकों, सुरभित सुगन्धि-युक्त वातावरण, मनोरम दृश्य ने उनका हृदय मोह लिया।

इसी के साथ ही उनको उस स्थान की स्थिति भी इच्छा अनुकूल लगी।

वस्तुतः महाराज अग्रसेन की हार्दिक इच्छा थी कि वह आगरा के अलावा अपनी राजनैतिक गतिविधि के लिए एक अन्य स्थान भी खोजें।

उनके हृदय में यात्रा सम्बन्धी एक यह भी प्रलोभन था। वह स्थान आगरा से २५० मील अधिक न था। प्राकृतिक दृष्टि-कोण से एक नगर के लिए वहां पर सभी सुविधाएं उपलब्ध थीं।

महाराजा अग्रसेन ने विद्वानों व गुरु पुरोहितों से सम्मति ली। महाराज की इच्छा को सब ने एक मत से अनुमोदन किया और अपनी सहर्ष सम्मति प्रदान करते हुए स्पष्ट स्वीकार किया कि वहां एक सुन्दर आधुनिक नगर स्थापित किया जा सकता है।

स्वीकृति प्राप्त करने के पश्चात, महाराजा अग्रसेन ने मार्ग शीर्ष मास की कृष्ण पक्ष की पंचमी, शनिवार की प्रातः बेला के समय इस नवीन नगर की स्थापना की नींव रखी। इस स्थान का नवीन नाम अग्रोहा रखा गया।

## अग्रोहा की सुरम्यता व सुन्दरता

इस नगर का क्षेत्रफल बीस सहस्र बीघा था। अपने युग के भवन निर्माण विशेषज्ञों की सहायता से महाराज अग्रसेन ने अग्रोहा-

नगर का नक्शा बनवाया ।

इस विशाल क्षेत्र के चारों ओर एक चहार दिवारी (प्रकोटा) बनवाया । यह प्रकोटा सुरक्षा की दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक था ।

प्रकोटे के बाहर चारों ओर गहरी खाईयां खुदवाई गई जिससे नगर की विशेष सुरक्षा का प्रबन्ध किया जा सके ।

नगर के बाहर व अन्दर जाने के लिए एक मात्र बिशाल एवं भव्य द्वार था ।

अग्रोहा नगर के अन्दर पचास सुन्दर फूलों व फलों के वृक्षों का निर्माण कराया गया जिससे नगर का सुन्दरता के साथ-साथ वातावरण भी सौम्य व शान्त रह सके । प्रत्येक बाग की लम्बाई दो मील थी । इस प्रकार सुन्दरता में अग्रोहा नगर की तुलना अन्य कोई उस युग का नगर नहीं कर पाता था ।

जनता के हितार्थ १५० पक्के पत्थरनुमा कूपों का निर्माण कराया गया था । यह सार्वजनिक कूप थे । जनता के अपने घरेलू कुए इसके अलावा थे ।

इस प्रकार महाराज अग्रसेन व जनता के सहयोग से उनके जीवन काल में अग्रोहा एक सुन्दर व रमणीय विशाल नगर का रूप ले चुका था । उस युग में अग्रोहा की जन्मसंख्या लाखों में हो गई थी ।

अनेक सुन्दर सरकारी व जनता की निजी भव्य अट्टालिकाओं का देखते ही देखते निर्माण हो गया । अनेक विदेशी व अन्य राजा महाराजा अग्रसेन द्वारा निर्मित नवीन अग्रोहा नगर का अवलोकन करने आते थे ।



समय के साथ आज अग्रोहा नगर के भव्य खण्डहर देखे जा सकते हैं ।

अग्रोहा नगर, आधुनिक हिसार, हरियाणा के प्रसिद्ध नगर से केवल ७ मील दूर स्थित था ।

आज भी इसकी स्थिति एक छोटे से अग्रोहा नामक ग्राम के रूप में स्मरणीय है । इस ग्राम से २ मील की दूरी पर खासा नाम का कस्बा स्थित है ।

खासा कस्बा के दूसरी ओर एक ग्राम तीन मील की दूरी पर खड़ी दुजी नामक स्थित है ।

करोर का वृक्ष और एक पक्का चबूतरा दुजी के निकट अग्रोहा की सीमा के बिस्तार का प्रतीक है ।

अग्रोहा नगर के खण्डहरात व भग्नावेष इस नगर की प्राचीन सत्यता का स्मरण दिलाते हैं । यह खण्डहर मीलों में फैले हुए हैं ।

यह तमाम खण्डहर देख कर कोई भी व्यक्ति कल्पना कर सकता है कि हजारों वर्ष पूर्व अग्रोहा नगर की विशालता व भव्यता अत्यन्त रमणीक ही होगी ।

कितने भाग्यशाली होंगे वे लोग जिन्होंने उस रमणीय नगर में निवास किया होगा, परन्तु आज कल्पना करते समय कोई भी यात्री अथवा अग्रवाल वंशज की आंखों में दो आंसू की बून्दें ही निकल सकती हैं । अथवा पूर्वजों का ख्याल ही दिला सकती है जिनका याद के प्रतिरूप अनेकानेक खण्डहर मीलों में चले गये हैं । जहां तक दृष्टि जाती है खण्डहर ही खण्डहर दिखाई पड़ते हैं । और अपने पूर्वजों की विशालता का उद्‌मोदन करते हैं ।

## दो पौराणिक कथाएँ

महाराजा अग्रसेन व अग्रोहा के सम्बन्ध में दो पौराणिक कथाएँ प्रचलित हैं। इन कथाओं का वर्णन पुराणों में मिलता है।

जानकारी के लिये हम इन कथाओं का वर्णन करते हैं। इन कथाओं में एक का सम्बन्ध महाराज अग्रसेन के पिता महाराजा महीधर के साथ संयुक्त रूप से बांध रखा है तथा दूसरे का सम्बन्ध महाराजा महीधर के स्वार्गारोहण के पश्चात् पिण्ड दान से उसका सम्बन्ध जोड़ रखा है।

कथाएँ निम्न हैं:—

## महाराजा महीधर व कन्या का श्राप

प्रथम कथा के अनुसार महाराजा महीधर की विशाल वैभवशाली सवारी उनके राज्य में निकल रही थी। महाराजा हाथी पर सवार थे।

यकायक महाराजा की दृष्टि एक नग्न तालाब में नहाती सुन्दरी पर पड़ी। वह एक ब्राह्मण कन्या थी।

महाराजा व सुन्दरी के नयन एक दूसरे से मिले।

ब्राह्मण कन्या की आंखें क्रोध से लाल हो गईं। उसको महाराजा के इस कृत्य पर अत्यन्त क्रोध हुआ।

महाराजा को भी दुःख हुआ और मन ही मन पश्चाताप होने लगा। महाराजा ने ब्राह्मण कन्या से क्षमा मांगनी चाही।

महाराजा ने कहा तू मेरी धर्म की पुत्री है, मेरी अक्समात तेरे ऊपर दृष्टि पड़ गई थी। परन्तु कन्या ने क्षमा नहीं किया, वह श्राप दे चुकी थी।

इस श्राप के अनुसार महाराजा महीधर की मृत्यु के पश्चात उनकी मुक्ति में अनेक बाधायें उत्पन्न हो गईं।



इस कन्या का एक अन्य रूप हम पिछले पृष्ठों में दे चुके हैं।

पौराणिक कथा के अनुसार महाराजा महीधर की मृत्यु के पश्चात महाराजा अग्रसेन अपने तमाम भ्राता व मन्त्री-मण्डल के साथ पिण्ड दान करने गया जी गये।

महाराजा अग्रसेन ने पिण्डदान तो कर दिया परन्तु महाराजा महीधर वह पिण्ड दान ग्रहण नहीं कर सके और उनको मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकी।

महाराजा अग्रसेन चन्द्रावती वापस लौट आये परन्तु हृदय में क्लेश सा रहा। चिन्ता में डूबे रहे व हृदय चिन्ता में मग्न रहने लगा।

क्लेश इतना अधिक था कि भूख प्यास भी मिट गई। कई दिन तक अन्न ग्रहण नहीं किया।

एक रात स्वप्न में महाराजा अग्र सेन को अपने पिता दिखाई दिये

स्वप्न में पिता पुत्र की बात चीत हुई। महाराजा महीधर ने शोकाकुल चिन्तित पुत्र को धैर्य बंधाया।

उन्होंने कहा कि वास्तव में मैं पिण्ड ग्रहण नहीं कर सका हूं। यह सब ब्राह्मण कन्या के श्राप के कारण है।

श्राप से मुक्ति पाने के लिये गया के स्थान पर लोहागढ़ में जाकर मुझे पिण्ड दान कर।

लोहागढ़ होशयारपुर पंजाब के समीप एक स्थान है।

महाराजा अग्रसेन की निन्द्रा उसी समय दूर हो गई। कई दिन के पश्चात हृदय में शान्ति उत्पन्न हुई। धैर्य बंधा।

महाराजा अग्रसेन ने उसी समय लोहागढ़ चलने का निश्चय किया।

महाराजा की आज्ञानुसार तैयारियाँ प्रारम्भ हो गईं। पूरा दल तैयार हो गया और तमाम भ्राता व मन्त्री-मण्डल ने लोहागढ़ की ओर प्रस्थान कर दिया।

लोहागढ़ में महाराजा अग्रसेन ने विधी प्रेम व श्रद्धा पूर्वक पिण्ड दान किया।

महाराजा महीधर ने श्राप से मुक्ति पाई और पिण्ड ग्रहण किया और पुत्र को आशीर्वाद दिया।

महाराजा अग्रसेन ने हर्षित होकर मंगलाचरण किया और वापिस राजधानी की ओर चल दिये।

## पौराणिक कथा का दूसरा अंग

इसी पौराणिक कथा के अन्य भाग के अनुसार महाराजा अग्रसेन जिस समय पिण्ड दान करके वापिस चल दिये थे तो रास्ते में एक भयानक जंगल पड़ा।

इसी जंगल में करील के वृक्ष की आड़ में एक सिंहनी के बच्चा होने वाला था।

वस्तुतः बच्चा आधा संसार में आ चुका था व बाकी भाग अभी सिंहनी के उदर में ही था।

महाराजा की सवारी के आगमन के कारण सिंहनी के प्रसव में बाधा पड़ गई। और इस विघ्न के कारण अर्धोत्पन्न बच्चा क्रोध के कारण पागल हो उठा।

उसी समय अर्धोत्पन्न सिंहनी के बच्चे ने राजा के हाथी के मुँह पर एक थप्पड़ मारा।

उसी समय सिंहनी भी उठ खड़ी हुई और राजा के सम्मुख



उपस्थित हुई। वह क्रोध से भरपूर थी।

सिंहनी ने महाराज से कहा कि हे राजन तूने मुझे सन्तान विहीन किया है। मैं जीवन में केवल एक ही बच्चा उत्पन्न करती हूं।

तेरे इस विघ्न के कारण मैं निःसन्तान ही रह गई हूं और अगला बच्चा उत्पन्न करने से असमर्थ हूं। अतएव मैं तुझे श्राप देती हूं।

महाराजा अग्रसेन घबड़ा गए, कुछ समय पूर्व एक श्राप से मुक्ति हुई थी। दूसरा श्राप और चढ़ रहा था।

महाराजा अग्रसेन ने सिंहनी के श्रद्धा पूर्वक हाथ जोड़े व गिड़गड़ाने लगे।

सिंहनी को महाराजा पर दया आ गई और क्षमा दान दे दिया, क्षमा दान के साथ ही सिंहनी जंगल के अन्दर की ओर चल दी।

महाराजा अग्रसेन ने सिंहनी के प्रस्थान के पश्चात उपस्थित ब्राह्मणजन व विद्वानों को तमाम बातों से परिचित कराया।

ब्राह्मणों ने सोच समझ कर अपना मत दिया।

मतानुसार ब्राह्मणों ने कहा कि यह भूमि अत्यन्त बलवती व उपजाऊ है। इस भूमि का जल व वायु स्वास्थय वर्धक व पवित्र है। दीर्घ आयु के लिए यह स्थान अत्यन्त शुभ है।

ब्राह्मणों ने एक मत होकर महाराज अग्रसेन को कहा कि इस स्थान पर एक सुन्दर नगर का निर्माण कराया जाए और यहीं निवास किया जाए।

ब्राह्मणों ने सोचविचार कर यह भी कहा कि इसी स्थान पर विष्णु भगवान तथा महादेव आपको दर्शन देकर आपके सौभाग्य में वृद्धि करेंगे।

आपकी वंश वेल पृथ्वी की उत्पत्ति तक सदैव फैलती फूलती

रहेगी।

नवीन नगर के विषय में ब्राह्मणों ने कहा कि यह नगर भी आप के वंश की एकता तक विद्यमान रहेगा।

जिस समय आपके वंश में एकता का स्थान फूट लेगी यह नगरी नष्ट भ्रष्ट हो जाएगी।

महाराजा अग्रसेन ने ब्राह्मणों व विद्वानों की आज्ञा को शिरोधार्य किया और शीघ्र ही एक नवीन नगरी उस स्थान पर बनवाने की आज्ञा दे दी।

यही नवीन नगरी ही अग्रोहा के नाम से विख्यात हुई।

अग्रोहा नगर चिरकाल तक फूला फला, इसने खूब उन्नति की।

यह भवन निर्माण कला व सुन्दरता का अनुपम उदाहरण था। पत्थर के कलात्मक पक्ष दर्शनिय थे और विशाल मन्दिर, शानदार भवन उस नगर में निर्मित किये गये थे।

अग्रोहा नगर का पतन भी अत्यन्त विचित्र परिस्थतियों में हुआ जिसका विवरण इस पुस्तक के अग्र पृष्ठों में दिया गया है।

## महाराजा अग्रसेन का राज्य कार्य विस्तार

महाराज अग्रसेन एक वीर पुरुष, महान योद्धा व सफल राजनीतिज्ञ थे। उन्होंने अपने पिता महीधर के राज्य का उचित प्रबन्ध ही नहीं किया अपितु सुविस्तार भी किया था।

महाराज अग्रसेन के पूर्वजों की राजधानी चन्द्रावती (अमरावती) थी। आगरा महाराज अग्रसेन के पिता ने उनके जन्म के उपलक्ष्य में बसाया था तथा अग्रोहा नगर का निर्माण उन्होंने स्वयं किया था।



हम पहले ही कह चुके हैं कि महाराजा अग्रसेन का समय अत्यन्त प्राचीन रहा है।

महाराजा अग्रसेन का विस्तृत इतिहास एक सूत्रबद्ध नहीं मिलता है। आदि ग्रन्थों में महाराजा अग्रसेन के बिखरे हुए बर्णन के बीच आता है कि उन्होंने सम्पूर्ण आर्यव्रत पर एक छत्र राज्य किया था।

राज्य कार्य के लिए एक योग्य मन्त्री मण्डल भी निश्चित किया था।

मन्त्री मण्डल राज्य कार्य का सुचारू रूप से प्रबन्ध करता था। मन्त्री मण्डल को विशेष अवसरों पर उचित सलाह देने के लिए गुरु व पुरोहित भी थे जिनकी सम्मति मार्ग दर्शन कराती रहती थी।

महाराजा अग्रसेन स्वयं भी मन्त्री मण्डल तथा गुरु पुरोहितों की सम्मति व परामर्श का विशेष रूप से अवलोकन करते रहते थे।

इस प्रकार महाराज अग्रसेन के राज्य कार्य में निजी सम्मति के साथ उनके अनेक मार्ग दर्शक भी थे। अतएव किसी भी गम्भीर त्रुटि की सम्भावना न्यूनतम ही थी।

महाराजा अग्रसेन की सेना अनेक वीर योद्धाओं से परिपूर्ण थी जो राज्य के बाहरी से शत्रु देशों सदैव सतर्क रहती थी। महाराजा अग्रसेन से शत्रु देश घबराये रहते थे और उनके राज्य की ओर दृष्टि डालने की बात तो दूर, सोचने की कल्पना से भी घबराते रहते थे।

## शिक्षा प्रबन्ध

महाराजा अग्रसेन ने देश की व्यवस्था के साथ-साथ आने वाली

पीढ़ियों की शिक्षा व चरित्र पर भी पूर्ण ध्यान दिया।

उन्होंने राज्य में अनेक गुरुकुलों की स्थापना कराई जिससे प्रजा यथेष्ट योग्य बन सके।

विश्व विख्यात महात्मा पातंजिली महाराज अग्रसेन के समकालीन हुए हैं। शास्त्र व शिक्षा व्यवस्था उन्हीं की देख रेख व निरीक्षण के अन्तर्गत थी।

महर्षि पातंजिली जागृति के सबसे उच्च आसन पर विराजमान थे। उनके निरीक्षण में महाराजा अग्रसेन के विशाल राज्य में स्थित अनेक गुरूकुल व बड़े बड़े ज्ञानी ऋषियों की १७ गद्दियों के अध्ययन का प्रबन्ध व व्यवस्था का उचित ध्यान रखा जाता था।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि महाराजा अग्रसेन के राज्य में १७ शिक्षा के विशाल केन्द्र स्थापित थे। जहाँ उच्च श्रेणी की शिक्षा दी जाती थी। और उस युग की आधुनिक शिक्षा का मनन होता रहता था।

१७ गद्दियों के अधिष्ठाता अत्यन्त ज्ञानी एवम् विद्वान ऋषि तथा मुनि थे। वे अकथ लग्न और श्रमपूर्वक भविष्यत नागरिकों की शिक्षा व उच्च चरित्र-निर्माण का पूर्ण रूप से ध्यान रखते थे।

## धर्म राज्य

महाराज अग्रसेन अत्यन्त सात्विक प्रवति के धर्म भीरू महान व्यक्ति थे। वह धर्म को जाग्रति स्रोत मानते थे। प्रत्येक नवीन राज्य कार्य अथवा शुभ अवसरों पर धर्म गुरूओं की सम्मति व आशीर्वाद लेना अपना विशेष कर्तव्य समझते थे।

वह वैदिक धर्म के उपासक थे। उन्होंने वेदानुसार गुरूकुल व



धर्म कर्म के नियम जनता में प्रस्तुत किये जिसके कारण उनका राज्य उन्नति की ओर अग्रसर होता रहा।

## गुरुकुल शिक्षा वर्णन

पूर्व वर्णनानुसार महाराजा अग्रसेन ने शिक्षा व्यवस्था पर विशेष ध्यान दिया। उनके राज्य में १७ गुरुकुल आधुनिक विश्वविद्यालय की श्रेणी के थे।

महाराजा अग्रसेन की शिक्षा व्यवस्था वेदानुकूल थी। वर्तमान युग में हमारे देश की शिक्षा व्यवस्था इंगलिश युग की देन है।

## वर्तमान शिक्षा पद्धति व्यवस्था

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था हमें अपनी प्राचीन आर्य सभ्यता से दूर ले जा रही है। वस्तुतः हम भूल ही चुके हैं कि हम महान आर्य संस्कृति के उपासक हैं।

वर्तमान शिक्षा पद्धति हमें 'हिप्पी बाद' की ओर ले जा रही है। इस शिक्षा व्यवस्था ने हमें अपने कर्त्तव्य से विमुख कर दिया है।

हम भूल चुके हैं कि हमारा देश अथवा राष्ट्र के प्रति कर्त्तव्य क्या है। हमारी सन्तान का अपने माता पिता के प्रति क्या कर्तव्य हैं।

वर्तमान शिक्षा पद्धति का उद्देश्य स्वयं हमारे शिक्षा मन्त्री अथवा राष्ट्र के कर्णधार ही नहीं समझ पा रहे हैं। वे इस प्रश्न का उत्तर स्वयं भी देने से असमर्थ हैं।

वर्तमान शिक्षा पद्धति ने हमारी सन्तानों में उच्छंखलता कूट-कूट कर भर दी है। हमारी सन्तान मार्ग से भटकी हुई है। देश प्रेम के स्थान पर विदेश प्रेम बढ़ता जा रहा है। प्रत्येक व्यक्ति

विदेशी भौतिकता को देखकर जीवन पर्यन्त ललायित रहता है। इस आधुनिक विचार धारा युक्त संस्कृति ने हमारी सन्तानों में जन्म दिया है 'हिप्पी वाद' को।

आज हमारी सन्तान विचित्र वेश भूषा सहित 'दम मारो दम' की उपासक बनती जा रही है। मार्ग से भटके हुए विद्यार्थियों ने शिक्षा के स्थान पर अपना तमाम ध्यान फैशन पर ही केन्द्रित कर दिया है।

प्रति दिन फेशन बदलते रहते हैं, कभी 'तंग पेन्ट' पहनते हैं तो कभी ढीली ढाली 'वेल वाटम टाइप'। कभी मूँछे साफ कर देते हैं तो कभी विचित्र प्रकार की लम्बी लम्बी सी मूंछे रख लेते हैं। यही बात सिर के वाल अथवा हेयर स्टायल के संबंध में भी कह सकते हैं। आज सिर के बाल लम्बे रखने का ही फेशन चल पड़ा है।

युवक व युवती में पीछे से तो पहचान ही समाप्त हो गई है। मुँह से विचित्र प्रकार से सिगरेट के धुयें के गुल छर्रे उड़ाते हुए निरर्थक भटकते दिखाई पड़ते हैं।

बात-बात पर लड़ाई झगड़ा करने से नहीं चूकते। छुरी की नोक पर परीक्षा भवन में नकल करते हैं। उलटे प्रोफेसर छात्रों से डर कर काँपते हैं। जरा सी बात पर हड़ताल कर देते हैं। विश्व-विद्यालय बन्द करा देते हैं।

अपना तमाम योवन का क्रोध सरकारी परिवहनों पर निकाल फेंकते हैं। रेलों तथा बसों में आग लगा देते हैं। उन्हें साधारण बातों के कारण तोड़ना-फोड़ना आरम्भ कर देते हैं। उन्हें फूँक देते हैं और भूल जाते हैं कि राष्ट्र का हित उनसे पृथक नहीं है।



हिप्पीवाद ने उनकी ललक चरस, भांग व शराब की ओर अत्यधिक बढ़ा दी है। आज का विद्यार्थी शराब व मांस भक्षण को बुरा नहीं मानता है। कालिज के युवा छात्र व छात्रायें चरस का सेवन काफी मात्रा में करने लगे है।

यह है वर्तमान युग की शिक्षा पद्धति की भारतीय संस्कृति को देन।

## महाराजा अग्रसेन की शिक्षा पद्धति

महाराजा अग्रसेन की शिक्षा पद्धति आर्य संस्कृति के अनुसार थी। अस्त्र-शस्त्र व शास्त्र विद्या के साथ-साथ चरित्र निर्माण पर विशेष बल दिया गया था।

१७ बड़े गुरुकुल उन्होंने स्थापित किए थे, जो उनके राज्य में दूर-दूर तक फैले हुए थे। प्रत्येक गुरुकुल पर वर्तमान युग के विश्व-विद्यालय के उपकुलपति के समान उन आश्रमों को ऋषि का संरक्षण प्राप्त था।

उनके पद की तुलना आज के विश्वविद्यालयों के कुलपति पद से कर सकते हैं।

इन तमाम सत्रह गुरुकुल आश्रमों में सबसे उच्च स्थान महात्मा पातंजलि को प्राप्त था।

महात्मा पातंजलि अग्रसेन महाराज के शिक्षा विभाग के सर्वोच्च अधिकारी थे। उनका पद कुलपति अथवा शिक्षा मंत्री के समानान्तर था।

## शिक्षा आश्रम व ऋषि वर्णन

जैसा पूर्व कहा जा चुका है कि महाराजा अग्रसेन ने १०० वर्ष

की आयु पाई व ६१ वर्ष आर्यव्रत पर राज्य किया। उनका राज्य संचालन के लिए काफी लम्बा समय मिला।

६१ वर्ष के समय में उन्होंने प्रत्येक व्यवस्था को सुचारू व आदर्श रूप देने का यत्न किया जिससे भविष्य में भी आने वाली सन्तानें उस व्यवस्था के अनुकुल चल सकें।

महाराजा अग्रसेन द्वारा संचालित १७ ऋषि आश्रमों के अधिष्ठाताओं का वर्णन निम्न प्रकार था :—

१. गर्ग ऋषि।
२. गोयल ऋषि।
३. कोसल ऋषि।
४. कांसल ऋषि।
५. जिंदल ऋषि।
६. मैथल ऋषि।
७. मदगल ऋषि।
८. दीनदल ऋषि।
९. एरन ऋषि।
१०. तायल ऋषि।
११. सींगल ऋषि।
१२. कछल ऋषि।
१३. तेंगल ऋषि।
१४. कोशल ऋषि।
१५. तांगल ऋषि।
१६. ढालन ऋषि।
१७. मधुकल ऋषि।



## न्याय विभाग

इसमें तो किंचित मात्र सन्देह नहीं कि देश व जाति प्रेम महाराजा अग्रसेन में कूट-कूट कर भरा हुआ था। उन्होंने आर्य जाति को एक निश्चित मार्ग दर्शन दिया।

मन्त्री मण्डल की स्थापना इस बात का स्पष्ट सबूत है कि वह तमाम राज्य कार्य व्यवस्थित रूप से ही पसन्द करते थे। प्रत्येक कार्य में मन्त्री मण्डल की सलाह लेते थे।

महाराजा अग्रसेन के न्याय विभाग के विषय में आदि ग्रंथों में स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता है। परन्तु कुछ दृष्टान्त मिलते हैं जिन पर यदि हम गम्भीर रूप से विचार करें तो हमें न्याय सम्बन्धी असाधारण जानकारी प्राप्त होती है।

सर्वप्रथम मन्त्री मण्डल की स्थापना ही इस बात का द्योतक है कि उनका तमाम राज्य कार्य एक व्यवस्थित रूप में संचालित था। अतएव यह बात शंका रहित है कि उनका न्याय विभाग पूर्ण विकसित अवश्य ही था।

न्याय सम्बन्धित विषय पर विचार करने के लिए इतिहास के पृष्ठों को उलटना आवश्यक है।

इतिहास साक्षी है कि यदि वीरता में संयम का समावेश न हो तो वह उच्छंखलता का रूप धारण कर लेती है। सिकन्दर महान, चंगेज खां व नादिरशाह इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं।

उपरोक्त तीनों व्यक्ति महान आत्मायें थीं, वे वीर योद्धा थे, परन्तु वीरता में उच्छंखलता ने समावेश कर लिया था। इतिहास सिकन्दर को 'महान' मानता है परन्तु अच्छी दृष्टि से नहीं देखता

है। बादशाह सिकन्दर को 'महान' उसकी मृत्यु पूर्व के अन्तिम पश्चाताप ने बनाया था।

सिकन्दर की अन्तिम इच्छा थी कि उसके दोनों हाथ अर्थी से बाहर निकाल दिए जाएं, जिससे आने वाली पीढ़ियाँ समझ सकें कि अन्याय पूर्ण युद्ध व अन्धाधुन्ध रक्त की नदियाँ तथा बेकसूर जनता का खून बहाने से आत्मा को शान्ति नहीं मिल सकती है।

अन्याय व राज्य की शक्ति के नशे में चूर बादशाहों को उसने चेतावनी दी थी कि मत भूलो वे भी सिकन्दर की भांति खाली हाथ संसार से जायेंगे। उसकी अन्तिम मनोदशा ने उसको 'महान' की संज्ञा दे दी थी और आज विश्व सिकन्दर को 'महान' के रूप में सम्बोधित करता है।

इसके विपरीत चंगेज खां व नादिरशाह को संसार खूनी, लुटेरा अथवा डाकू ही मानता है। नफरत की निगाह से देखता है।

इन दृष्टान्तों को सम्मुख रखने का तात्पर्य है कि वीर पुरुष के हृदय में यदि ईश्वर के प्रति श्रद्धा हो, मन में दया हो व धर्म में आस्था हो तो वह 'महान' बन जाता है। और यदि ये तमाम विशेषतायें किसी देश के सर्वोच्च नेता में विद्यमान हैं तो वह नेता देश का सर्वोत्तम पथ-प्रदर्शन करता है और जनता को पूर्ण न्याय देता है। वह राजा अन्याय कदापि सहन नहीं कर सकता है।

अतएव सर्वगुण सम्पन्न न्यायशील राजा में तीन गुण आवश्यक हैं :—

१. वीरता।
२. धर्म प्रेम।
३. दयावान।



उपरोक्त कसौटी पर यदि महाराजा अग्रसेन को तोला जाए तो निसन्देह महाराजा अग्रसेन एक वीर योद्धा तथा बलवान महापुरुष थे।

धर्म प्रेम व हृदय में दया के विषय में महाराजा अग्रसेन के जीवन से सम्बन्धित दो प्रचलित कथायें पर्याप्त मार्ग दर्शन कराती हैं।

एक कथा महाराज अग्रसेन के पिता के पिण्डदान से संबंधित है तथा दूसरी लोहागढ़ से वापसी के समय शेरनी के प्रसव से संबंधित है। इन कथाओं के विषय में विस्तृत रूप से पिछले पृष्ठों में वर्णन किया जा चुका है।

इन कथाओं को हम पौराणिक गल्प ही कह सकते हैं। इन कथाओं में पूर्ण सत्यता का भान नहीं होता है।

पिण्ड दान वेदानुकूल नहीं है। शेरनी का मनुष्य से बात करना एक असम्भव बात है, फिर जब उत्पन्न शेरनी के बच्चे का हाथी के मुँह पर थप्पड़ मारना तथा शेरनी का महाराजा को श्राप देना एक व्यर्थ को बात है। हो सकता है कि जिस प्रकार पिण्ड दान संबंधी महाराज अग्रसेन को स्वप्न दिखाई दिया था उसी प्रकार शेरनी का श्राप भी एक अन्य स्वप्न की बात हो।

शेरनी से संबंधित कथा का एक रूप यह भी हो सकता है।

लोहागढ़ से वापसी के समय महाराजा अग्रसेन ने जंगल में एक शेरनी को प्रसव अवस्था में देखा हो। महाराजा की सवारी के कारण शेरनी को प्रसव के समय विघ्न पड़ा हो।

शेरनी की व्याकुल प्रसव वेदना व उनकी उपस्थित के कारण जो बाधा पड़ी थी, उससे उनके मन में व्याकुलता अथवा वेदना के

भावों का तूफान उनके हृदय में उठ खड़ा हो गया हो। और उसी अवस्था के कारण रात स्वप्न में उन्होंने शेरनी से बात-चीत की हो। श्राप की बात सुनी हो तथा शेरनी के बच्चे को हाथी के थप्पड़ मारने का दृश्य देखा हो।

महाराज ने सुबह यही स्वप्न की बात उपस्थित मन्त्री मण्डल के सदस्यों तथा विद्वान व्यक्तियों को बधाई हो। उन्होंने महाराज के मन की मलिनता दूर करने के लिये ही अग्रोहा नगर बसाने का मत दिया हो।

उस समय के उपलब्ध ग्रन्थ हस्त लिखित थे। महाराजा अग्रसेन के पश्चात ७५०० वर्ष में भारत पर अनेकानेक विपत्तियां आईं।

महाभारत के युद्ध की भयानकता से हम अनजान नहीं हैं। महाभारत काल के पश्चात बाममार्गी आये जिन्होंने हमारे प्रत्येक ग्रन्थ को बुरी तरह तोड़ा मरोड़ा। जीवन के प्रत्येक पहलू में उन्होंने वासना का वभीत्स रूप देखा। उस युग में आर्य जनता का मनो-बल बिल्कुल टूट चुका था।

वाम मार्गियों के पश्चात मुगलकाल आया जिस युग में अपने देश में हिन्दू रूप में रहने के दण्ड स्वरूप प्रत्येक हिन्दू मतावलम्बी को 'जजिया' कर भी देना पड़ता है।

हिन्दू धर्म ने इतनी भयानक दुर्दशा-पूर्ण समय देखा कि देखते-देखते दक्षिण पूर्वी एशिया, वर्मा, मलेशिया, सिंगापुर, इन्डोनेशिया, पाकिस्तान, भारत, बंगलादेश में अनेक हिन्दू व आर्य, मुस्लिम मतावलम्बी हो गये, अपने धर्म से ही विमुख हो गये और हिन्दुओं के ही कट्टर विरोधी बन गये।



इंगलिश युग में अनेक हिन्दुओं ने ईसाई मत भी ग्रहण कर लिया।

हिन्दू धर्म पर जिस समय इतने कष्ट आये हुए हों को क्या हम कल्पना कर सकते हैं कि हमारा इतिहास अथवा धर्म ग्रन्थ सुरक्षित रह सकते हैं।

अतः हम कल्पना कर सकते हैं कि महाराजा अग्रसेन के जीवन से सम्बन्धित दोनों कथाएँ कुछ अंश में सत्य हो सकती हैं। उनका रूप चाहे जो भी रहा हो।

हम वापिस अपने विषय पर आते हैं।

पिण्ड दान सम्बन्धी तथ्य महाराजा अग्रसेन की धार्मिक आस्था व पितृ प्रेम का द्योतक है।

शेरनी के प्रसव तथ्य महाराजा अग्रसेन के हृदय में दया का प्रतीक है।

जिस महापुरुष में वीरता कूट-कूट कर भरी हो, धर्म में आस्था हो व दया के विषय में जानवरों पर भी अन्याय प्रसहिय हो वह क्या अपने राज्य में अन्याय सहन कर सकता है।

इसका केवल एक ही उत्तर हो सकता है, 'कदापि नहीं।'

उपरोक्त दृष्टान्त व घटनायें सिद्ध करती हैं कि महाराज अग्रसेन उचित न्यायकारी राजा थे। न्यायपूर्ण राज्य कार्य करने में उनको मन्त्री मण्डल सहित अनेक विद्वान व्यक्तियों का भी सहयोग प्राप्त था।

## विश्व लोक-तन्त्र प्रणाली के अधिष्ठाता

हम पूर्ण विश्वास के साथ कह सकते हैं कि महाराजा अग्रसेन

ने आज से हजारों वर्ष पूर्व अनजाने लोकतन्त्र प्रणाली की स्थापना में विश्वास प्रकट किया था।

मन्त्री मण्डल व विद्वानों का सहयोग प्राप्त करना, उनसे समय-समय पर राज्य सम्बन्धी विचार विमर्श इस बात के स्पष्ट प्रमाण है।

इसी पुस्तक में अन्यत्र महाराज अग्रसेन के पुत्रों सम्बन्धी शस्त्र व शिक्षा विद्या के विषय में अध्ययन करते समय आप स्वयं महसूस करेंगे कि हमारी आस्था में कितना वजन है।

अपने पुत्रों की उच्च शिक्षा का प्रबन्ध करते समय महाराजा अग्रसेन ने महाऋषि पातंजली की अध्यक्षता में एक विशेष सभा का आयोजन किया। इस विशेष सभा में तत्कालीन मन्त्री-मण्डल के सदस्य तथा अनेकानेक विद्वान सम्मिलित थे। उन्हीं के विचार विमर्श स्वरूप उन्होंने अग्र वंश को एक स्थिर दशा दी जिसका हम आज भी अनजाने पालन कर रहे हैं।

अगले परिच्छेद के पठन के पश्चात पाठक स्वयं प्रतीत करेंगे कि महाराजा ने अपने पुत्रों की समयानुकूल उच्च शिक्षा पर इसलिए पूर्ण आस्था प्रगट की थी क्योंकि वह वंश की परम्परा के साथ-साथ उनका अटूट विश्वास था कि यदि राजा वीर, विद्वान, शास्त्र व शस्त्रविद्या में निपुण नहीं होगा तो उचित शासन के योग्य नहीं होगा।

विद्या के लिये उचित मार्ग दर्शन के लिये ही विद्वानों की गोष्ठि उन्होंने बुलाई थी।

इस प्रकार महाराज अग्रसेन अपने आपको निरंकुश, मन-मानी करने वाले, कठोर हृदय महाराज न होकर वर्तमान राष्ट्रपति अथवा प्रधान मन्त्री के समान उच्चतम आसन पर विराजमान थे और



समझते थे कि भविष्यत राजा भी निरंकुश प्रकृति का न होकर सर्व सम्मत्ति से राज्य शासन करने योग्य व्यक्ति होना आवश्यक है।

अतएव हम दृढ़ विश्वास व निश्चित एक मत होकर अपना एक मत प्रगट करते हुए कह सकते हैं कि महाराजा अग्रसेन की विचार धारा में अनजाने जनता द्वारा मार्ग दर्शन की इच्छा प्रगट हो चुकी थी चाहे यह बात समयानुकूल न थी। परन्तु हम यदि गम्भीरता से सोचें कि यदि कौरव वंशज सम्राट दुर्योधन यदि निरंकुश शासन सम्राट न होता। उसके भी एक मन्त्री मन्डल होता और वह मन्त्री मण्डल से विचार विमर्श करता तो सम्भवतः महा-भारत का युद्ध टल जाता और भारत उस अधोगति की ओर न अग्रसर होता जिसका भुगतान आज भी प्रत्येक भारतवासी भुगत रहा है।

## महाराजा अग्रसेन का परिवार

महाराजा अग्रसेन के दो विवाह के विषय में पाठकों को परिचित करा ही चुके हैं।

महाराजा अग्रसेन के १८ पुत्र हुए। ९ पुत्र बड़ी रानी सुन्दरावती से उत्पन्न हुये तथा ९ पुत्र छोटी रानी धनपाला से उत्पन्न हुये।

रानी सुन्दरावती से उत्पन्न पुत्रों के क्रमशः नाम निम्न हैं।

१ विशपदेव (गुलाबदेव)
२ गेंदूमल
३ करनचन्द्र
४ मणिपाल (कानकुन्द)

५ बलन्दा (बन्धुभान)
६ ढाऊदेव
७ सिन्धुपति
८ जीतजनक
९ मन्त्रपति

रानी धनपाला से उत्पन्न पुत्रों के क्रमशः नाम निम्न हैं :—

१ तम्बूल
२ ताराचन्द्र
३ वीरभान
४ वासुदेव
५ नृसिंह (नारसेन)
६ अमृतसेन
७ इन्द्रमल (इन्द्रसेन)
८ माधोसेन
९ गोधर

महाराजा अग्रसेन के सबसे बड़े पुत्र विशपदेव (गुलाबदेव) थे।

गुलाबदेव ही राज्य के भावी अधिकारी थे। अतः वह राजकुमार के पद से सुशोभित थे।

महाराज अग्रसेन के सबसे बड़े पुत्र प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त कर चुके थे। कुछ राजकुमार प्रारम्भिक शिक्षा के योग्य हो चुके थे तथा बाकी अभी बच्चे ही थे।

इतिहास के अप्राप्य होने के कारण हमें शिक्षा के सम्बन्ध में भी कल्पना का सहारा लेना पड़ता है।

हमारे विचारानुसार १८ पुत्रों के जन्म में अन्तर होना तो

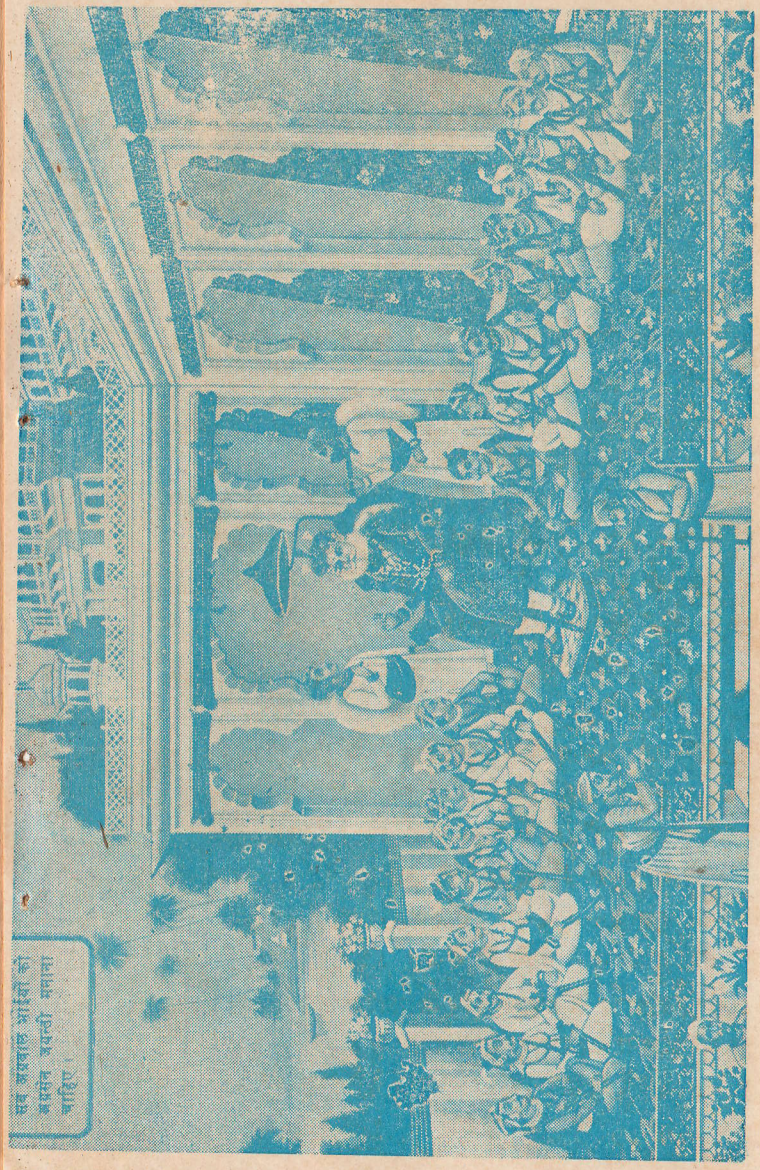

स्वाभाविक है ही। अतएव तमाम राजकुमारों के शिक्षा काल में अन्तर भी अवश्य होगा।

अतः हमारा मत है कि सबसे बड़े, उनसे छोटे राजकुमार की आयु में कम से कम २ वर्ष से लेकर १२ वर्ष तक की आयु का अन्तर हो सकता है।

जिस समय महाराजा अग्रसेन के सबसे बड़े पुत्र उच्च शिक्षा के योग्य हुए होंगे उस समय उनके छोटे भाई प्रारंभिक शिक्षा का अध्ययन कर रहे होंगे तथा कुछ इतने छोटे होंगे कि उन्होंने एक-दो वर्ष के पश्चात ही शिक्षा का आरम्भ किया होगा।

महाराजा अग्रसेन के इतिहास का गहरा मनन करने के पश्चात ऐसा प्रतीत होता है कि जिस समय उनके सबसे बड़े पुत्र गुलाबराय उच्च शास्त्र व शस्त्र विद्या ग्रहण के योग्य हुए थे, उस समय तक महाराजा अग्रसेन के तमाम १८ पुत्रों का जन्म हो चुका था।

महाराजा अग्रसेन ने अत्यन्त सोच विचार कर एक विद्वानों की सभा का आयोजन किया।

उस सभा में महर्षि पातंजलि को भी निमन्त्रित किया गया था। आदि ग्रंथों के अनुसार महर्षि पातंजलि ने उन दिनों मौन व्रत रखा हुआ था।

महात्मा पातंजलि ने इस निमन्त्रण को अत्यन्त महत्वपूर्ण समझा क्योंकि उस सभा द्वारा महाराज अग्रसेन के पुत्रों अथवा आर्यव्रत के भावी सम्राटों की शिक्षा का प्रबन्ध करना था।

वस्तुतः उस युग के संत, महात्मा, ज्ञानी, ऋषि, मुनि, विद्वान आदि राष्ट्र की भलाई सर्वोपरि समझते थे। वर्तमान युग के संत, ज्ञानी अथवा ध्यानी अधिकतर अपने हृदय में कृतिमता अथवा

पाखण्ड बसाये होते हैं। उनके हृदय की भावना और बाहरी आडम्बर में जमीन तथा आसमान का अन्तर होता है।

वर्तमान युग के साधु, महात्मा के विषय में सम्पर्क में आए बिना कुछ भी कहना असंभव है, परन्तु महाराज अग्रसेन का युग महान था। उनके राज्य में तपस्वी पारब्रह्म परमेश्वर की भक्ति के साथ-साथ राष्ट्र भक्ति का महत्व सर्वोपरि समझते थे।

महात्मा पातंजलि ने उस महत्वपूर्ण अवसर पर अपना मौन व्रत तोड़ा और असाधारण सभा में सम्मिलित हुए।

महाराजा अग्रसेन ने सभा में उपस्थित विद्वानों का स्वागत करते हुए कहा कि—'हे विद्वानो, पण्डितो, ऋषि मुनियों व अन्य सज्जनों ! आप इस राष्ट्र के भुज-बल हैं तथा आपके ही सहयोग से राज्य उन्नति की ओर निरन्तर अग्रसर हो रहा है।

'यह उन्नति मेरे विचार में आप सबके सहयोग के प्रताप के कारण ही संभव हो सकी है।

'किसी राष्ट्र की उन्नति अथवा अधोगति का कारण उस राज्य का सर्वोच्च अधिकारी होता है। प्रभु कृपा से इस पद पर आज मैं आसीन हूं।

'कुछ राजकुमार अब शिक्षा ग्रहण के योग्य हो चुके हैं। क्योंकि भविष्यत राज्य कार्य का बोझ उन पर भी पड़ना है। अतएव मेरी हार्दिक इच्छा है कि इस योग्य जो भी राजकुमार हो चुके हैं उनको आपकी सम्मति के अनुसार राज्य स्थित गुरुकुल में भेज दूँ।

'आप सोच विचार कर मेरा मार्ग दर्शन करें। मैं चाहता हूं कि आप सब मिलकर एक मत मुझे सम्मति दें कि इन राजकुमारों को किन-किन गुरुकुलों में अध्ययन हेतु भेजना है जिससे कि इस विषय



में भविष्यत रूप-रेखा निर्धारित की जा सके। और इस सभा द्वारा राजकुमारों की पूर्ण शिक्षा संबंधी निर्णय हो सके।'

'समस्त पण्डित व उपस्थित सज्जन विचार-विमर्श करते रहे परन्तु एक मत न हो सके। अन्त में महर्षि पातंजलि ने अपना मौन व्रत तोड़ते हुए महाराजा और उपस्थित सज्जनों को सम्बोधित करते हुए कहा कि—आप सबको मेरे मौन व्रत के विषय में पता है ही। प्रस्तुत सभा एक असाधारण आवश्यक कारण हेतु बुलाई गई है, आज सब एकमत होकर इस विषय पर अपनी सम्मति देने में असमर्थता प्रतीत कर रहे हैं अतएव मुझे अपनी प्रतिज्ञा भंग करते हुए मौन व्रत तोड़ना पड़ा है।

'मैंने इस विषय पर अत्यन्त गम्भीरता से सोच विचार किया है, मेरा मत यह है—

'आज हमारे आर्यवर्त में १७ ऋषि गुरुकुल स्थापित हैं। इस शुभ अवसर पर उन सब गुरुकुलों के विद्वान ऋषि व मुनि भी उपस्थित हैं। मेरे विचार में राजपुत्रों का उच्च विद्या शास्त्र तथा शस्त्र सम्बन्धी अध्ययन पृथक-पृथक गुरुकुलों में होना चाहिए।

'अतएव मेरी सम्मति है कि प्रत्येक राजपुत्र को पृथक-पृथक गुरुकुल में भेजा जाए।

'अब हमारे सम्मुख समस्या है कि गुरुकुल १७ हैं तथा राजपुत्र १८। इस समस्या का निदान भी मैंने सोचा है। सबसे बड़े पुत्र विशपदेव व सबसे छोटे पुत्र गोधर की आयु में काफी अन्तर है। अतएव मेरे विचार के अनुसार गुलाब देव व गोधर को एक ही ऋषि के आश्रम में भेजने का निर्णय उचित होगा।'

## आश्रम के अनुसार शिष्यों का विभाजन

(१) सबसे ज्येष्ठ राजपुत्र 'विश्पदेव' तथा सबसे छोटे पुत्र गोधर के हित में 'गर्गेस्य ऋषि' के आश्रम का निश्चय किया गया।

(२) राजपुत्र 'गेंदूमल' के हित में 'गोभिल ऋषि' के आश्रम का निर्णय किया गया।

(३) राजपुत्र 'वीर भान' के हित में 'वतस्य ऋषि' के आश्रम का निर्णय किया गया।

(४) राजपुत्र 'वासुदेव' के हित में 'कोसल ऋषि' के आश्रम का निर्णय किया गया।

(५) राजपुत्र 'जीत जनक' के हित में 'जैमुनि ऋषि' के आश्रम का निर्णय किया गया।

(६) राजपुत्र 'मन्त्रपति' के हित में 'मैथल ऋषि' के आश्रम का निर्णय किया गया।

(७) राजपुत्र 'अमृतसेन' के हित में 'मांडिल ऋषि' के आश्रम का निर्णय किया गया।

(८) राजपुत्र 'जीत जनक' के हित में 'वशिष्ट ऋषि' के आश्रम का निर्णय किया गया।

(९) राजपुत्र 'इन्द्रमल' के हित में 'धनज्यास ऋषि' के आश्रम का निर्णय किया गया।

(१०) राजपुत्र 'ताराचन्द' के हित में 'तेत्रेय ऋषि' के आश्रम का निर्णय किया गया।

(११) राजपुत्र 'सिन्धुपति' के हित में 'हण्डेल ऋषि' के आश्रम का निर्णय किया गया।



(१२) राजपुत्र 'करनचन्द्र' के हित में 'कश्यप ऋषि' के आश्रम का निर्णय किया गया।

(१३) राजपुत्र 'तम्बूल' के हित में 'ताड़िया ऋषि' के आश्रम का निर्णय किया गया।

(१४) राजपुत्र करनचन्द्र' के हित में 'कोशल ऋषि' के आश्रम का निर्णय किया गया।

(१५) राजपुत्र 'नृसिंह' के हित में 'नगेन्द्र ऋषि' के आश्रम का निर्णय किया गया।

(१६) राजपुत्र 'ढाऊदेव' के हित में 'धोया ऋषि' के आश्रम का निर्णय किया गया।

(१७) राजपुत्र 'माधोसन' के हित में 'मधगल ऋषि' के आश्रम का निर्णय किया गया।

## महर्षि पातंजिलि निर्णय विवेचन

महर्षि पातंजिलि के निर्णय का विवेचन करते समय दो प्रश्न मस्तिष्क में उठते हैं :—

(१) महर्षि पातंजिलि ने प्रत्येक राजकुमार के लिए पृथक-पृथक आश्रम का चुनाव ही क्यों किया ?

(२) महर्षि पातंजिलि ने सबसे बड़े पुत्र विशप देव व सबसे छोटे पुत्र गोधर के लिए 'गर्ग ऋषि' के आश्रम का निर्णय ही क्यों किया ?

## प्रथम प्रश्न विवेचन

शारीरिक विकास, बल व बुद्धि कुछ सीमा तक ईश्वरीय देन भी होती है। शारीरिक बल का विकास पुष्टकारी औषधि अथवा

शारीरिक व्यायाम अथवा अन्य सांसारिक ढंग से एक सीमा तक ही हो सकता है। प्रमाण स्वरूप हम उदाहरण दे सकते हैं कि एक पिता के दो पुत्र होते हैं।

पिता दोनों पुत्रों का समान ही रूप से लालन-पालन करता है। उनका खान-पान व शिक्षा का प्रबन्ध एक ही प्रकार का होता है।

इन सब साधनों की समान उपलब्धियों के बावजूद एक पुत्र डाक्टर बन जाता है व दूसरा साधारण उन्नति ही कर पाता है।

महात्मा पातंजिलि विद्वान महर्षि थे। उन्होंने सोचा होगा कि प्रत्येक पुत्र मस्तिष्क व शारीरिक दृष्टिकोण से समान तो हो नहीं सकता। यदि प्रत्येक पुत्र की शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध एक ही आश्रम में किया गया तो स्वभावतः बुद्धिमान राजपुत्र की ओर गुरु का विशेष झुकाव व आकर्षण होना स्वाभाविक है।

यह विशेष झुकाव व आकर्षण अन्य राजपुत्रों के हृदय में हीनता व आत्म-ग्लानि की भावना उत्पन्न कर सकता है।

शनैः शनैः ये विपरीत भावनायें ईर्ष्या की भावना उत्पन्न करती हैं। ईर्ष्या शत्रुता बढ़ाने में आग पर घी का काम देती है।

राजपुत्रों में इस प्रकार की भावनायें विष का बीजारोपण कर सकती हैं और भविष्य में सर्वनाश का कारण बन सकती हैं।

सम्भवत यही कारण महर्षि पातंजिलि के विवेक में विराजमान होगा और उन्होंने अपनी विचार धारा विविध आश्रमों में राजपुत्रों को भेजने की व्यक्त की होगी।

उपरोक्त कारण के साथ एक अन्य दृष्टिकोण भी महर्षि पातंजिलि के मस्तिष्क में होगा।

तमाम राजपुत्र जिस समय विभिन्न ऋषियों के आश्रम में



शिक्षा ग्रहण कर रहे होंगे, उस दशा में प्रत्येक महर्षि अपने आश्रम में आये हुए राजपुत्र को उसे अपने ज्ञान, विज्ञान के तमाम भेद बताने व सिखाने का यत्न करेगा।

उस महर्षि को पता है कि अन्य राजपुत्र विभिन्न आश्रमों में शस्त्र व विद्या का ज्ञान उपार्जन कर रहे हैं, अतएव संसार के सम्मुख अमुक राजपुत्र द्वारा ही उनकी शिक्षा का प्रस्तुतीकरण किया जा सकता है। वह अमुक आश्रम की प्रसिद्धि में सहायक हो सकती है।

इस प्रकार स्वतः ही एक तुलनात्मक प्रतिद्वन्द आरम्भ हो जाता है।

यह प्रतिद्वन्दता एक दृष्टिकोण को लिए हुए हो सकती है। इसके परिणाम राज्य हित में शुभ ही हो सकते हैं।

यह आदर्श उस समय महर्षि पातंजिलि के मष्तिष्क में हो सकते हैं। यह हमारा अपना विचार है। इसका इतिहास से संबन्ध नहीं है।

## द्वितीय प्रश्न विवेचन

महर्षि पातंजिलि ने महाराजा अग्रसेन के सबसे जयेष्ठ पुत्र तथा सबसे छोटे पुत्र गोधर के लिए एक ही महर्षि का आश्रम क्यों चुना ?

उत्पत्ति के अनुसार सबसे बड़े व सबसे छोटे पुत्र में १०-१२ वर्ष का अन्तर स्वाभाविक ही है।

अतएव हो सकता है कि जिस समय सब से छोटा पुत्र आश्रम में जाने के योग्य होने वाला हो उस समय विश्व देव शिक्षा पूर्ण ही कर चुका हो।

वस्तुतः महर्षि पातंजिलि व महाराज अग्रसेन का उस सभा में निर्णय करने का आशय राजपुत्रों की शिक्षा सम्बन्धी एक निश्चित रूप रेखा बनाने तथा नियत करने का रहा होगा।

अतएव हम कह सकते हैं कि महाराज अग्रसेन की शिक्षा सम्बंधी योजना एक अत्यन्त प्रभावशाली व उत्तम विचार धारा युक्त थी। हम आधुनिक युग में भी हम इस योजना को अपनी सन्तानों की शिक्षा के सम्बन्ध में फलीभूत कर सकते हैं।

## महाराजा अग्रसेन के पुत्रों के गोत्र

महात्मा पातंजिलि के निर्णय के अनुसार महाराज अग्रसेन के सुयोग्य पुत्रो शस्त्र व शास्त्र विद्या में पारंगत हुए व बड़े होकर राज्य कार्य में सहयोग देने लगे।

महाराज अग्रसेन के पुत्रों के गोत्रों का प्रचलन ऋषि कुल की शिक्षा के अनुसार निश्चित किया गया।

आधुनिक काल में गोत्रों का अशुद्ध रूप दृष्टि गोचर होता है। अतएव हम ऋषि क्रमानुसार शुद्ध व प्रचलित गोत्र दोनों की व्याख्या प्रस्तुत करते हैं।

| क्रम संख्या | ऋषि नाम के अनुसार गोत्र | प्रचलित गोत्र |
|---|---|---|
| १ | गर्गेस्य | गर्ग |
| २ | गोभिल | गोयल |
| ३ | वतस्य | बंसल |
| ४ | कोशल | कांसल |
| ५ | जैमुनि | जींदल |
| ६ | मैंगेयी | मैथल |



| | | |
|---|---|---|
| ७ | मौडिल | मंगल |
| ८ | वशिष्ट | जिंदल |
| ९ | धनष्यास | एरन |
| १० | हण्डेल | सिंगल |
| ११ | कश्यद | कचहल |
| १२ | ताडिया | तंगल |
| १३ | कोशल | कौशल |
| १४ | तंगेय | तायल |
| १५ | नगेन्द्र | तांगल |
| १६ | धोया | ढालन |
| १७ | मधगल | मधुकल |

प्रचलित गौत्रों के नाम इसके अलावा अन्य अन्तर भी मिल सकता हैं। उदाहरणतया मेरे एक मित्र बलराम एडवोकेट है। वे अग्रवाल ही हैं। उनका प्रचलित गौत्र सिंगल हैं परन्तु वह 'संगल' ही लिखते हैं। इसी प्रकार 'कचछल' गोत्र के अग्रवाल भाई अपने भाई के पश्चात 'कंछल' भी लिखते देखे गए हैं।

## साढ़े सत्तरह गोत्र

सर्व साधारण अग्रवाल जाति में गौत्रों की संख्या साढ़े सतरह विख्यात है।

महाराजा अग्रसेन के सबसे छोटे पुत्र गोधर व सबसे बड़े पुत्र विशप देव (गुलाब देव) का अध्ययन गर्गरूप ऋषि के आश्रम में ही हुआ था।

महाराजा अग्रसेन के पुत्रों ने जिस जिस ऋषि के आश्रम में

शिक्षा पाई उनका शिक्षा अध्ययन के अनुसार ही नाम विख्यात हुआ।

वर्तमान युग में भी यदि कोई डाक्टर एम बी. बी. एस. परीक्षा बम्बई से पास करता है तो वह अपना नाम का सम्बोधन इस प्रकार करता है—

डा० ओम प्रकाश अग्रवाल एम. बी. बी. एस. (बम्बई)

इसी प्रकार कई डाक्टर अपने नाम की डिग्री के आगे लन्दन, U. S. A. आदि लिख देते हैं।

इसी के अनुसार हम समझ सकते हैं कि उस युग में विद्वता की द्योतक ऋषि आश्रम हुआ करता था।

महाराज अग्रसेन के सबसे बड़े पुत्र ने गर्गस्य ऋषि के यहां सर्वोच्च शिक्षा पाई थी। अतएव उनके नाम के आगे 'गर्गस्य' शब्द प्रयुक्त होने लगा।

'राजकुमार विशपदेव गर्गस्य' से स्पष्ट पता चल जाता है कि वे गर्गस्य ऋषि के आश्रम के छात्र रहे थे तथा वहीं से शिक्षा सम्पन्न की थी।

अतएव महाराज अग्रसेन के सबसे बड़े पुत्र का नाम गर्गस्य निश्चित हो गया।

इसी प्रकार किस पुत्र ने जिस गुरु से शिक्षा प्राप्त की उसी ऋषि के आश्रम के अनुसार गोत्र निश्चित कर दिया गया।

महाराज अग्रसेन के अठारवां पुत्र गोधर था। उसने व विशपदेव ने एक ही ऋषि आश्रम में शिक्षा पाई थी।

अतएव अत्यन्त सूझ बूझ व विद्वानों की सम्मति के अनुसार राजपुत्र गोधर के गोत्र की पृथक पहचान के लिए उसका 'गोन'



गोत्र निश्चित किया गया था। इस गोन' गोत्र के कारण सर्व साधारण अग्रवाल भ्राता आपने साढ़े सत्तरह-गोत्र कहते हैं। वास्तव में गोत्र अठारह ही हैं।

अग्रवालों का अठारवां गोत्र 'गोन' है।

## गोत्र प्रचलन

महाराजके वंशजों ने उन ही आश्रमों के उत्तरोत्तर अधिकारियों से शिक्षा ग्रहण करने का क्रम प्रचलित रखा। और इन आश्रमों के उत्तराधिकारी वंशानुवश गुरु पुरोहित होते रहे। उनके वंशजों ने उसी मान्य व पूज्य दृष्टि से उन ऋषियों के वंशजों को अपना गुरु पुरोहित माना।

शनैः शनैः अविद्याधंकार पनपता रहा और अग्रवाल वंश अज्ञानता के अन्धकार में फंस कर अपना अतीत का गौरव खो बैठा।

अपढ मूर्ख ब्राह्मणों के पंजों में फंस गया। वे मूर्ख महाचार्य ब्राह्मण भी अग्रवाल सन्तान को अपनी परम्परागत सम्पत्ति मान बैठे।

उन अपढ व मूर्ख पण्डितों ने धीरे-धीरे अनेक पोप लीलाओं का रंग अन्धविश्वासी अग्रवाल सन्तानों पर चढ़ाना शुरू कर दिया।

इस प्रकार अनेक मनगढन्त विचारों व अज्ञान रूपी मलीन जल ने अग्र वाल विचारधाराओं में अन्ध विश्वास ने जन्म ले लिया।

हम अग्रवाल वंशजों का कर्तव्य है कि अन्ध विश्वास का त्याग करें और वेदानुकूल चलने का प्रयत्न करें। वेदों का पठन पाठन करें। अपनी कमाई का कुछ अन्शों से ऐसे संस्थाओं का प्रसार करायें जिसमें कम से कम वेद सम्बन्धी साधारण ज्ञान का प्रसार अपने अग्र वाल समाज में हो सके।

## महाराज अग्रसेन का भाट स्थापन

महाराजा अग्रसेन के एक भगिनी कम्बोदी थी।

कम्बोदी अत्यन्त सुशील, सुन्दर व बुद्धिमान कन्या थी।

कम्बोदी का विवाह सूरजपुर के महाराजा सूरजभान से हुआ था।

महाराजा सूरजभान के कम्बोदी के उदर से एक पुत्र जसराज उत्पन्न हुआ।

जसराज अत्यन्त मेधावी व होनहार तरुण था। उसने अल्प-आयु में ही अनेक शास्त्रों, वेद, पुराणों का अध्ययन कर लिया था।

विद्या अध्ययन स्वरूप उस के हृदय में वैराग्य की भावना उत्पन्न होने लगी। उसे संसार नाशवान प्रतीत हुआ।

यकायक वैराग्यवश राज्य व गृहस्थ त्याग कर वह जंगलों में प्रस्थान कर गया और ईश्वर भक्ति में लीन हो गया।

महाराजा अग्रसेन ने अपने विद्वान भांजे को अपने राज्य में निमन्त्रित किया। महाराजा अग्रसेन व उनकी दोनों महारानियों ने जसराज को प्रणाम किया और प्रतिज्ञा की—मेरे कुल का बच्चा-बच्चा तेरे कुल का मान करेगा व अपने वंश के भाट के उच्च आसन पर विराजमान करेगा और उचित सम्मान व पूजा करेगा।

महाराजा अग्रसेन ने जसराज को अग्रवंश का भाट नियुक्त किया और ७००० गौ, ११०० बैलगाड़ी, ५०० हाथी, ७०० वरन दरबोरी, ८०० रेडियपील, ५००० फोजी, सवा मन मोती तथा १७ लाख रुपये के लगभग जागीर प्रथम भाट मानते हुए भेंट स्वरूप अर्पित की।



जसराज ने हर्ष पूर्वक दान को ग्रहण किया और आशीर्वाद दिया कि अग्रवाल वंश कलान्तर तक फूले व फलेगा। इसके पश्चात जसराम ने जंगलों की ओर प्रस्थान कर दिया।

## महाराज अग्रसेन के पुत्रों का विवाह

महाराज अग्रसेन के प्रत्येक पुत्र के ब्याह दो बार हुए।

प्रत्येक पुत्र का प्रथम विवाह अपने अधिकृत प्रदेश के राजाओं की कन्याओं से किया तथा द्वितीय विवाह पाताल देश के महाराजा वासक की पुत्रियां से हुआ।

## प्रथम विवाह वर्णन

महाराजा अग्रसेन ने समयानुसार अपने प्रत्येक पुत्र का विवाह उन राजाओं की कन्याओं से कर दिया जिन्होंने विशाल राज्य क्षेत्र की आधीनता स्वीकार कर ली थी।

महाराजा अग्रसेन विशाल भूमि पर राज्य करते थे। अनेक राजाओं ने उनकी आधीनता स्वीकार करते हुए सन्धि कर ली थी।

सम्भवतः सन्धि के अनुसार अधिकृत उस प्रदेश का राजा महाराजा अग्रसेन को कर का कुछ भाग देता रहता होगा।

उदाहरणतया मुगल युग व अंग्रेजी काल में अनेक हिन्दू व मुसलिम राजाओं ने मुगल बादशाहों व इंगलेंड के ताज की आधीनता स्वीकार कर ली थी। उदयपुर, जयपुर, ग्वालियर आदि अनेक महाराजा सन्धि के अनुसार राजा के सिहासन पर विराजमान तो थे परन्तु आधीनता स्वरूप उनको अपनी राज्य की आय का विशेष भाग टेक्स के रूप में देना पड़ता था।

महाराजा अग्रसेन का अपने अधिकृत प्रदेशों के राजाओं की सुयोग्य कन्याओं से विवाह करने से उनको दो लाभ हुए।

प्रथम तो उन्होंने अधिकृत प्रदेश के राजाओं से सम्बन्ध सुगठित किये दूसरे प्रस्तुत विवाह उनके मानसिक बड़प्पन के स्पष्ट प्रमाण था। वह व्यर्थ के भेद भाव में विश्वास नहीं रखते थे।

महाराजा अग्रसेन के पुत्रों के प्रथम विवाह का क्रमानुसार वर्णन-

(१) राजकुमार विशपदेव का विवाह संगलद्वीप प्रदेश के राजा साहदांन की राजकंया पोपनन्दरी से हुआ था।

(२) राजकुमार गेंदूमल का विवाह गढ़रोता प्रदेश के राजा चन्द्र की राजकन्या चंद्रावती से हुआ था।

(३) राजकुमार करनचंद्र का विवाह भादूगढ प्रदेश के राजा सिन्धु की राजकंया सिन्धुवन्ती से हुआ था।

(४) राजकुमार मणिपाल का विवाह दरयावखण्ड प्रदेश के राजा वाहक की राजकंया हंसावती से हुआ।

(५) राजकुमार वलंद वंधुमान का विवाह मनुकंद प्रदेश के राजा मनध्वज की राजकंया आसावंती से हुआ था।

(६) राजकुमार ढाऊदेव का विवाह व वरहानगरी प्रदेश के राजा अरकसेन की राजकंया अरस्ता से हुआ था।

(७) राजकुमार वीर भान का विवाह पूर्णावस प्रदेश के राजा विजय चन्द की राजकन्या चन्द्र देवी से हुआ था।

(८) राजकुमार वासुदेव का विवाह भ्रातपुर प्रदेश के राजा जनत की राजकन्या स्वयं देवी से हुआ था।

(९) राजकुमार जीन जनक का विवाह रंगपुर प्रदेश के राजा



समाध्वज की पुत्री समावती से हुआ था।

(१०) राजकुमार मन्त्रपति का विवाह अमरावती प्रदेश के राजा अमीसेरन की राज्यकन्या अमीरा देवी से हुआ था।

(११) राजकुमार अमृतसेन का विवाह दीवनपुर प्रदेश के राजा इन्द्रसेन की राज्यकन्या माधीवन्ती से हुआ था।

(१२) राजकुमार इन्द्रमल (इन्द्रसेन) का विवाह भीमपुर प्रदेश के राजा लोकन्द की राजकन्या लोकन्दा देवी से हुआ था।

(१३) राजकुमार तारा चन्द का विवाह सरवरगढ़ प्रदेश के राजा माधोसेन की राजकन्या नोरंग देवी से हुआ था।

(१४) राजकुमार सिंधुपति का विवाह लाल नगर प्रदेश के राजा जवालसेन की राजकन्या वसन्ती से हुआ था।

(१५) राजकुमार तम्बूल का विवाह आरा नगर प्रदेश के राजा सिन्धु की राजकन्या गोमती से हुआ था।

(१६) राजकुमार नृसिंह (नारसेन) का विवाह मधुपुर प्रदेश के राजा मणी की राजकन्या शीलवती से हुआ था।

(१७) राजकुमार माधोसेन का विवाह तानपुर प्रदेश के राजा वीर भान की राजकन्या मोहिनी से हुआ था।

(१८) राजकुमार गोधर का विवाह वलहक गढ़ प्रदेश के राजा सुदर्शन की राजकन्या तारावती से हुआ था।

इस प्रकार तमाम राजकुमारों के विवाह करके महाराजा अग्रसेन ने निश्चिन्ता प्राप्त कर ली थी।

तमाम राजकुमार भी अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक अपना आनन्दमय दाम्पत्य जीवन बिता रहे थे तथा महाराजा अग्रसेन को राज्य सुचारू रूप से व्यवस्थित करने में पूर्ण रूपेण सहयोग दे रहे थे।

## महाराजा अग्रसेन के पुत्रों के द्वितीय विवाह

महाराजा अग्रसेन के पुत्रों के द्वितीय विवाह की कथा भी अत्यन्त रोचक तथा विचित्र है।

महाराजा अग्रसेन के पुत्रों के विवाह को अधिक समय नहीं हुआ था कि महाराजा अग्रसेन को अहिनगरी अनरोताव पाताल देश (जिसको वर्तमान काल में अमरीका कहते हैं) के दूत के आने की सूचना मिली।

सूचनानुसार पाताल देश के महाराजा वासक, जो कि प्रसिद्ध राजा जामवन्त के पुत्र थे। उनके दूत ने महाराजा अग्रसेन के सम्मुख उपस्थित होकर एक पत्र प्रस्तुत किया।

पत्र में अहिनगरी (पाताल देश) के महाराजा ने आर्यव्रत के महाराजाधिराज अग्रसेन को अपना अभिवादन प्रस्तुत करते हुए लिखा था कि उनकी सेवा में वर्तमान दूत एक विशेष प्रयोजनवश भेज रहा हूं।

दूत ने अत्यन्त विनम्र एवं प्रार्थनापूर्वक कहा कि हे चक्रवर्ती महामहिम सम्राट, मेरे स्वामी महाराजाधिराज पाताल नरेश की १८ कन्यायें हैं। उनको पता चला है कि आपके १८ पुत्र हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि यह ईश्वरीय संयोग है।

हे आर्यव्रत शिरोमणि महाराजधिराज उनकी हार्दिक इच्छा है कि आप अपने राजकुमारों का सम्बन्ध हमारे महाराजा की राज-कन्याओं के साथ स्वीकार करें।

दूत ने यह भी प्रार्थना रूप में कहा कि हमारे महाराजा ने आप के पुत्रों की योग्यता व साहस के अनेक दृष्टान्त सुने हैं। उनकी एक



प्रतिज्ञा यह भी है कि मैं अपनी सुयोग्य पुत्रियों के विवाह एक ही राज परिवार में करेंगे जिसके १८ पुत्र होंगे। यह भी संयोग व ईश्वरीय देन है कि आपके भी अठारह पुत्र हैं। इस सम्बन्ध के पश्चात आर्यव्रत व पातालपुरी के सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ट व सुदृढ़ हो जायेंगे।

महाराजा अग्रसेन ने दूत की तमाम बातें ध्यानपूर्वक सुनीं। निमंत्रण पर अत्यन्त सूक्ष्म दृष्टि से विचार विमर्श किया तथा इसके पश्चात इस निमंत्रण को स्वीकार कर लिया।

दूत की प्रार्थना स्वीकार करके उसे सम्मान पूर्वक विदा किया और मंत्री मण्डल की बैठक में उपरोक्त सूचता देने के पश्चात आदेश दिया कि राजकुमारों के पाताल देश की राजकन्याओं के साथ विवाह के उचित प्रबन्ध किये जायें।

मंत्री मण्डल ने शीघ्र ही यथाशक्ति विवाह तथा यात्रा सम्बन्धी आयोजन पूर्ण करके महाराजा अग्रसेन को सूचित कर दिया।

महाराजा अग्रसेन ने प्रसन्नता पूर्वक अत्यन्त सजधज के साथ पाताल देश की यात्रा प्रारम्भ की।

शुभ घड़ी व महूर्त में राजकुमारों के विवाह पाताल देश की राजकुमारियों के साथ सम्पन्न हुए।

इस प्रकार महाराजा अग्रसेन के यश रूपी कीर्ति स्तम्भ की यह महान सफलता थी। पाताल देश से सम्बन्ध स्थापित होने के पश्चात महाराजा अग्रसेन एक शक्तिशाली राष्ट्र के संस्थापक व विशाल भूखण्ड के निर्विवाद महाराजा बन चुके थे।

पाताल देश के महाराजा वासक का आदि ग्रंथों में नागराजा के नाम से भी सम्बोधन मिलता है।

## नागराजा समालोचना

महाराजा वासक को नागराजा क्यों कहा गया है, यह एक विचित्र प्रश्न हमारे मस्तिष्क में उपस्थित होता है।

प्रश्न का उत्तर समझने के लिए अनेक ग्रंथ देखे परन्तु कुछ विशेष मार्ग दर्शन न मिल सका।

इसी उलझन के बीच यकायक एक कल्पना मस्तिष्क में उभरी और कुछ मार्ग दर्शन सा मिलता दृष्टिगोचर हुआ।

पाठक स्वयं ही निर्णय करेंगे कि हमारी कल्पना उचित है अथवा नहीं।

यदि हमसे सहमत नहीं हैं तो हम उनकी असहमति का विरोध नहीं करेंगे।

इस प्रश्न पर असाधारण गम्भीरता से विचार करने का एक विशेष कारण है।

वस्तुतः इस प्रश्न के उत्तर से ही महाराजा अग्रसेन ने आर्यव्रत के राज परिवारों की पुत्र वधुओं तथा पाताल देश के महाराजा वासक की पुत्र वधुओं की सन्तानों में एक विशिष्ट अन्तर निरिवत किया।

एक किवदन्ती आज भी भारत के रूढ़िवादियों तथा प्राचीन विचार धारा में विश्वास करने वालों के मस्तिष्क में विराजमान है।

यह विश्वास ही उनकी दृढ़ता का प्रतीक है।

भारत में यह विश्वास है पृथ्वी नाग देवता के विशाल फन पर टिकी हुई है।

आर्यव्रत की स्थिति ऊपर की ओर है तथा पातालपुरी अथवा



अमरीका आर्यव्रत के बिल्कुल नीचे है।

पातालपुरी नाम ही इस बात का द्योतक है।

वर्तमान युग में भी अमरीका की स्थिति भारत के बिल्कुल नीचे वज्ञानिकों ने स्वीकार की है। पृथ्वी का रूप गोल गेंद के समान है। भारत व अमरीका की स्थिति बिल्कुल ऊपर व नीचे है।

प्राचीन विश्वास के अनुसार दो बातें निश्चित होती हैं—

१. पातालपुरी बिल्कुल भारत के नीचे है।

२. नीचे ही एक विशाल नाग ने पृथ्वी अथवा विश्व को अपने विशाल फन के ऊपर टिकाया हुआ है।

अतएव पातालपुरी की राजकन्याओं की स्पष्ट जानकारी व वर्गीकरण करने के लिए महाराजा वासकी का सम्बोधन आदि ग्रंथों में 'नागराजा' के नाम से किया गया था।

पातालपुरी के महाराजा वासकी की राजकन्याओं का सम्बोधन नाग कन्यायें तथा उनसे उत्पन्न सन्तानों का सम्बोधन 'नागवंशी' के नाम से किया गया।

इस विषय में पूर्ण विचार शीघ्र अगले पृष्ठों में व्यक्त करेंगे।

## नाग कन्याओं की विवाह सम्बन्धी व्याख्या

| क्रम सं० | नाम राजकुमार | नाम नाग कन्या |
|---|---|---|
| १. | विशपदेव | पना देवी |
| २. | गेंदूमल | तम्बोल देवी |
| ३. | करनचन्द्र | कुसनीति |
| ४. | मणीपाल | विशन देवी |
| ५. | वलन्दा | पाली |

| | |
|---|---|
| ६. ढाऊदेव | उमा देवी |
| ७. वीरभान | शान्ती |
| ८. वासुदेव | गोमती |
| ९. जीतजनक | हीरा देवी |
| १०. मन्त्रपति | गोमन्दी |
| ११. अमृतसेन | अमरावती |
| १२. इन्द्रमल (इन्द्रसेन) | केशो देवी |
| १३. तारा चन्द | लडवन्ती |
| १४. सिंधुपति | एला देवी |
| १५. तम्बोल | रामावन्ती |
| १६. नृरसिंह (नारसेन) | अशावन्ती |
| १७. माधोसेन | नारंग देवी |
| १८. गोधर | मधुवन्ती |

## वीसा अग्रवाल अर्थ वर्णन

वर्तमान युग में प्रायः अग्रवाल अपने को 'वीसा' से सम्बोधन करते हैं। यह वीसा अग्रवाल महाराजा अग्रवंश से उत्पन्न परिवार का परिचायक है।

गोत्र का परिचय उस ऋषि कुल से संबंध बताता है जिसमें महाराजा अग्रसेन के अमुक पुत्र ने शिक्षा ग्रहण की थी।

महाराजा अग्रसेन ने भारतीय राजकन्याओं से उत्पन्न सन्तानों को राज वंशी की उपाधि से विभूषित किया और पातालपुरी की राजकन्याओं से उत्पन्न सन्तानों को नाग वंशी की 'विशिष्टता' पूर्ण उपाधि से अलंकृत किया।



प्रत्येक अग्रवाल वंशज 'वीसे' का अर्थ जानने का विशेष इच्छुक रहता है।

हमने इस विषय पर काफी मनन किया और एक तथ्य पर पहुंचे। तथ्य इस प्रकार है—

महाराजा अग्रसेन ने अपनी सन्तानों को 'राज वंशी' व 'नाग-वंशी' की उपाधियों से 'विशिष्टता' सहित अलंकृत किया था।

यह 'विशिष्टता' ही 'वीसा' का प्रतीक अथवा अपभ्रंश रूप बन गया।

हम इससे पूर्व अनेक बार कहते आए हैं कि हमारे पूर्वजों ने अपने जीवन काल में अनेक उथल-पुथल देखीं।

महाभारत से पूर्व महाराजा अग्रसेन का काल देखा।

महाभारत काल से पूर्व का उत्थान का समय देखा जो भारत का स्वर्ण युग था।

महाभारत के पश्चात दुर्भाग्य पूर्ण समय देखा जो महान अनर्थ व विनाश रूपी था।

वाम मार्गीयों का कुत्सित व अविवेक पूर्ण विचार धारा के बीच हमारे पूर्वज गुजरे।

मुस्लिम युग की करीब १००० वर्ष की गुलामी देखी।

अधोपतन की चरम सीमा के बीच गुजरते हुए हमने अंग्रेजों का विपत्तियों से भरा युग देखा।

राज वंशी व नागवंशी शब्द भी समय की तीव्र धारा में लुप्त प्रायः हो गए। 'विशिष्टता' शब्द का विकृत रूप 'बीसा' रह गया।

बीसा शब्द गिनती का प्रतीक बन गया।

आज हम अपने कुल जाति का सम्बोधन करते वक्त तीन बातों का उच्चारण करते हैं—

१. अग्रवाल, २. गोत्र, ३. बीसा।

इस प्रकार उपरोक्त तीन शब्द प्रत्येक अग्रवश के अनुयायी को अपने अथवा अन्य संबंधी कुटुम्ब के अनुयायी के विषय में पूर्ण जानकारी दे देता है।

इस प्रकार महाराजा अग्रसेन ने अपने अग्र वंश के अनुयायियों को एक पृथक विशिष्ट मार्ग दर्शन दिया। जिससे काल का विशाल चक्र भी उनको अपनी विशष्टता व कुल सम्बन्ध का यथेष्ठ ज्ञान देता रहे।

यही कारण है कि संसार में अनेक प्रलय आये। काल चक्र की गति घूमती रही सम्भवतः अग्र वंश उपासकों के परिवार आज भी सुरक्षित हैं।

अनेक हिन्दू परिवार अपने धर्म से विचलित हो कर विधर्मियों के धर्म में सम्मिलित हो गये, अपना धर्म भी भूल गये। पूर्वजों की याद विसार बैठे परन्तु अग्र वंश के अनुयायी अपने धर्म से अडिग रहे और आज भी अडिग हैं।

## यात्रा सम्बन्धी प्रसंग

राजकुमारों के विवाह आदि से निश्चिन्तता प्राप्त करने के पश्चात महाराज अग्रसेन विधी पूर्वक राज्य कार्य में जुट गये।

उनका परिवार एक विस्तृत रूप ले चुका था। यह उचित समय था जब महाराजा अग्रसेन अपने यश व वंश परम्परा का पूर्ण विस्तार कर सकते थे।

उन्होंने मन्त्रि मण्डल व अन्य विद्वानों से विधि पूर्वक विचार-विमर्श करके अपने पुत्रों को अन्य देशों की यात्रा के लिए प्रोत्साहित कीया।



उनका विचार परम्परागत पद्धति के अनुसार भूमण्डल के समस्त राजों-महाराजों से एक्यता तथा प्रेम का संबंध स्थापित करके विश्व को एक सूत्र में बांधना था।

विश्व प्रेम के साथ-साथ विश्व धर्म व संसार के राज नियम, संस्कार, आचार-विचार, विद्या अन्य आवश्यक जानकारी प्राप्त करना भी एक उद्देश्य था।

इस प्रकार सम्भवतः महाराजा अग्रसेन विश्व के प्रथम राजा थे जिन्होंने सर्वप्रथम विश्व संस्कृति, भ्रातृ भाव आदि आवश्यक तथ्यों की ओर ध्यान दिया।

## राजकुमारों की यात्रा

पित्र आज्ञानुसार तमाम आयोजन की रूप-रेखा निश्चित की जाने लगी और एक विशेष तिथि की घोषणा कर दी गई।

घोषणानुसार उक्त तिथि को राजकुमारों ने आर्य धर्म व संस्कृति का प्रचार करने के लिए विदेश प्रस्थान करना निश्चित किया।

निश्चित तिथि पर समस्त राजकुमारों ने अपने पूज्य पिता महाराजा अग्रसेन व माताओं का सादर अभिवादन किया तथा एक महान कार्य का हृदय में दृढ़ संकल्प लेकर एक विशाल यात्रा पर निकल पड़े।

समस्त राजकुमारों के साथ उनकी भार्यायें भी थीं।

आगरा से चलकर इस दल ने मार्ग में एक सुरम्य भव्य स्थान पर विश्राम किया।

दो तीन दिन मंगलाचरण व यात्रा संबंधी विचार विमर्श किया। यात्रा की भविष्यत रूप-रेखा निश्चित की।

आपस में सोच-विचार व एकमत होकर ज्येष्ठ भ्राता विशपदेव ने अपने अनुज भ्रातओं को सम्बोधित करते हुए कहा कि हे मेरे भुजबलो ! अग्रवंश के होनहारो ! भारत माता के सुपुत्रो ! महाराजा अग्रसेन के कुल दीपको ! विद्याबल के निधियो ! बुद्धि के स्रोतो ! आप सब विद्वान हैं व प्रतिभावान हैं। आज जिस विशाल शुभ कार्य हेतु हम निकले हैं उसके ध्येय से आप पूर्ण परिचित हैं।

हमारा राज्य एक शक्तिवान व सम्पन्न राष्ट्र है परंतु संसार सुख-दुख, समृद्धि व विपत्ति का समुद्र है। हमारे अनेक मित्र हैं, परंतु छिपे रूप से अनेक शत्रु भी हो सकते हैं। ऐसे राज्य अनुयायी भी हो सकते हैं जो बाहरी अथवा लोक दिखावे में मित्र लग सकते हैं परतु हृदय में मलिनता लिए हों, हमारे राष्ट्र की उन्नति से हृदय में क्लेश मानते हों, भेड़ की शक्ल में भेड़िये का रूप धारण किए हों ऐसे शत्रुओं से हमें निरन्तर सावधान रहना है।

न जाने हमारी अनुपस्थिति में कौन शत्रु हमारे देश पर युद्ध के लिए तुल बैठे। हमारे राष्ट्र से युद्ध लेना कोई खेल नहीं है, जो देश हमसे टकराने की सोचेगा भी उसकी खैर नहीं है। वे शत्रु राष्ट्र अपने आपको विपत्ति से घिरा पायेंगे परंतु समय बलवान होता है। ईश्वर व होनी के आगे ब्रह्मा को भी नम्र होना पड़ता है। अतएव मैंने सोचा है कि हम एक स्थान नियत करें जहाँ हमें एक निश्चित तिथि तक वापिस पहुंचना है और प्रतिक्षा करनी है। इस के पश्चात हमें एक साथ अपने राज्य वापिस पहुंचना है।

तमाम राजकुमारों ने अपने बड़े भ्राता विशपदेव की आज्ञा का समर्थन किया। सोच-विचार कर एक स्थान 'भव्य भूमि' निश्चित की गई।



आदि ग्रंथों के अनुसार वह भव्य स्थल अग्रोहा के समीप विशाल रमणीय क्षेत्र था।

इसके पश्चात तमाम भ्राता पित्र आज्ञा पूर्ण करने के लिए विभिन्न दिशाओं की ओर अग्रसर हो गए।

राजकुमारों की विदेश यात्रा महाराजा अग्रसेन के युग की एक विशेष घटना थी।

तमाम राजकुमार एक लम्बे समय तक अन्य देशों की यात्रा में व्यस्त रहे। उन्होंने आर्य संस्कृति का पूर्णरूपेण प्रसार किया व प्रसिद्धि का मार्ग प्रशस्त किया। उनका स्थान-स्थान पर भव्य स्वागत हुआ। उन्होंने अंधकार से घिरे राज्य परिवार व जनता के हृदय से अज्ञानता दूर की और भारतीय दर्शन तथा ज्ञान रूपी भण्डार से जीवन में मार्ग दर्शन कराया।

उनकी स्थान-स्थान पर प्रशंसा हुई व उनका यश, आदर व सत्कार प्रत्येक स्थान पर किया गया।

## यात्रा सम्बन्धी भ्रान्ति

राजकुमारों की वापसी संबंधी एक विचित्र भ्रांति का विवरण महाराजा अग्रसेन से संबंधित ग्रंथकारों ने किया है।

रामचन्द्र गुप्ता अग्रवाल जो पटियाला के रहने वाले एक अत्यन्त विद्वान सज्जन हुए हैं उन्होंने महाराजा अग्रवंश के इतिहास पर महत्वपूर्ण खोज की थी।

अपनी खोज के पश्चात ई० सन १९२६ में उन्होंने अग्र वंश के इतिहास संबंधी तथ्य एक पुस्तिका के रूप में प्रकाशित किए।

उनकी खोज अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध हुई और उनके द्वारा प्रका-

शित पुस्तक हमें महाराजा अग्रसेन के जीवन के विषय पर विस्तृत रोशनी डालती है।

रामचन्द्र अग्रवाल द्वारा प्रकाशित ग्रथ के पृष्ठ ६३ व ६४ पर वे लिखते हैं। उन्हीं के शब्दों में—

'मित्रो ! मेरे प्यारे भाईयों ! पूजनीय महानुभावों ! और बहनों ! समय सदा एक सा नहीं रहता, जो आज उन्नति पर है, वह कल अवश्य अवनति को प्राप्त होता है, जिसका राज्य का सितारा आज भूमण्डल पर चमक रहा है उसका कभी चित्र तक नहीं मिलेगा, प्राचीन समय में जितने प्रसिद्ध राजे महाराजे बीते हैं, जिनकी कोई उपमा नहीं थी, आज कहां हैं, केवल उनके सुकृत्य उनके गौरवान्वित कार्य उनकी स्मृति कराते हैं या वे खण्डहर दृष्टिगोचर होते हैं। जहाँ पर कभी पर्वत, निर्जन बन था आज पुष्पोद्यान बन रहा है, जिस भूमि को सहस्त्रों मनुष्य अपनी पवित्र वाणियाँ बोलकर वेद मन्त्रों से गुंजा रहे थे आज खण्डहर और भयावह वीभत्स जंगल बने हैं, किसी पुरानी बोली का नाम नहीं सुनाई नहीं देता, परमात्मा की अद्भुत लीला है इसका पार कोई पा नहीं सकता, अन्धेरी रात्रि के पश्चात सूर्य का प्रकाश आता है, प्रकाश के पश्चात फिर अंधेरी छा जाती है, इसी नियमानुसार महाराजा अग्रसेन के राज्य ने भी उन्नति से अवनति की ओर पदार्पण किया, एक समय था जबकि महाराजा अग्रसेन के नाम की प्रतिष्ठा संसार में विराजमान थी। समस्त संसार के राजा महाराजा अग्रसेन के सामने अपना सिर नवाने में अपना गौरव समझते थे, एक दिन वह आया जब चारों ओर से राज्य पर आक्रमण आरम्भ हुए और अग्रसेन को पराजित कर राज्य को नष्ट भ्रष्ट कर डाला। वाहरे प्रभु, तू धन्य है। और



धन्य तेरी अपारमयी लीला को। जिसे चाहे राजा से कंगला बना दे, जिसको तू चाहे भिक्षुक से राज्य सिंहासन पर बिठा दे ! तथापि, महाराजा अग्रसेन का राज्य भी समय के चक्र से न बच सका। जैसा कि पहिले लिख आये हैं (पृष्ठ ४३) पर भी यही बात लिखी थी) जब महाराज अग्रसेन के समस्त पुत्र विदेशों की यात्रार्थ गये हुए थे, तो शत्रुओं ने सुअवसर पाकर आक्रमण कर महाराजा को मार डाला और राज्य नष्ट भ्रष्ट कर दिया।

## हमारा मत

उपरोक्त विचार श्री रामचन्द्र गुप्त अग्रवाल के हैं। हम इस तथ्य से मतभेद करते हैं।

मतभेद प्रकट करने से पूर्व हमारा महाराजा अग्रसेन से सम्बंधित अन्य तथ्यों पर विचार विमर्श करना आवश्यक है। यह दो तथ्य हैं—

(१) काल सम्बन्धी तथ्य

(२) अग्रोहा सम्बन्धी तथ्य।

## काल सम्बन्धो तथ्य

महाराजा अग्रसेन १०० वर्ष की पूर्ण आयु को प्राप्त हुए, यह एक तथ्य है जिसके अनेक इतिहास कार, स्वयं रामचन्द्रगुप्त अग्रवाल व हम भी स्वीकार करते हैं।

महाराजा अग्रसेन ने १०० वर्ष के जीवन भोगते हुए ६१ वर्ष निरंतर राज्य किया।

महाराजा अग्रसेन के पुत्रों ने अपनी भार्याओं के साथ विदेश को प्रस्थान किया था। प्रस्थान के समय की आयु के विषय में ग्रन्थकार

चुप है, परंतु लेखनशैली से यह स्पष्ट पता चलता है कि द्वितीय विवाह के शीघ्र पश्चात वे विदेश यात्रा पर चल दिये थे।

एक ज्वलन्त प्रश्न हमारे मस्तिष्क में उठता है कि यदि महाराजा अग्रसेन के पुत्र अपने पिता के स्वर्गवास के पश्चात वापिस आये तो क्या वे सब वृद्ध हो चुके थे। क्योंकि महाराजा अग्रसेन का स्वर्गवास १०० वर्ष की आयु में हुआ था।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सबसे बड़े व सबसे छोटे पुत्र की आयु कम से कम ८० वर्ष से लेकर ६५ वर्ष तक होनी चाहिये। यह बात असम्भव व निरर्थक सी प्रतीत होती है। कोई भी यात्रा ६० वर्ष की नहीं होती है।

आगे पृष्ठों में हमने महाराजा अग्रसेन के पुत्रों की वशांवली भी प्रस्तुत की है।

वशांवली के अनुसार प्रत्येक पुत्र के राजवंशी व नाग वंशी दोनों पत्नियों के एक से अधिक सन्तान हुईं, तो प्रश्न उठता है कि वे सब सन्तानें यात्रा के बीच ही उत्पन्न व बड़ी हुईं ?

यह सब असम्भव बात हैं। वस्तुतः महाराजा अग्रसेन के पुत्रों की विदेश यात्रा के सम्बंध को अग्रोहा विनाश से जोड़ना एक भ्रांति है। सत्य यह है—

महाराजा अग्रसेन ने अपने पुत्रों को विदेश यात्रा पर भेजा। विदेश यात्रा का प्रयोजन विश्व के राजे महाराजों से मंत्री सम्बंध, विश्व बन्धुत्व स्थापित करना व वैदिक धर्म से विश्व को परिचित कराना था।

उपरोक्त यात्रा अस्थाई तथा कुछ वर्षों के लिए थी, आयोजन के अनुसार एक विशेष वक्त तक उस यात्रा को समाप्त करके मध्य भूमि, नामक स्थल पर सबको इकट्ठे होना था।



अतएव वस्तुतः महाराजा अग्रसेन का राज्य उनके जीवन काल व उनके स्वर्गारोहण के पश्चात चिरकाल तक खूब यश सहित फूला फला।

## अग्रोहा सम्बन्धी तथ्य

अग्रोहा नगर का महाराजा अग्रसेन के जीवन व उनके पश्चात खूब विकास हुआ।

विकास का एक अन्य विशेष कारण और भी था।

अग्रोहा नगर में जो भी अजनबी बाहर का व्यक्ति स्थाई रूप से निवास की योजना से आता था, राज्य आज्ञानुसार उसको यथेष्ट सहयोग मिलता था।

राज्य सहयोग के अतिरिक्त अग्रोहा निवासी उक्त व्यक्ति को एक रुपया और एक ईंट देता था।

एक रुपया व एक ईंट की प्राप्ति से उक्त अजनबी का वित्त संकट के साथ मकान बनाने की समस्या भी हल हो जाती थी।

## अग्रोहा विनाश

अग्रोहा का विनाश उसके निर्माण के करीब ५००० वर्ष पश्चात हुआ था।

अग्रोहा के विनाश के विषय में प्रसिद्ध है कि ईसा से ३२७ वर्ष पूर्व सिकन्दर ने भारत पर हमला किया था।

सिकन्दर के आक्रमण के समय अग्रोहा के सिंहासन पर नन्द वंश का राज्य था।

महाराजा नन्द राजा अग्रसेन के वंश से सम्बंधित ही कुल के एक राजा थे।

महाराजा नंद के राज्य के अंतर्गत १०० छोटे राज्य भी थे जिनके राजा विभिन्न थे, परंतु आधिपत्य महाराज नंद का ही था।

महाराजा नंद का एक भतीजा था गोकुल चंद।

गोकुल चंद का राज्य भी नंद वंश के आधिपत्य के अंतर्गत था। कुल घाती गोकुलचंद ही अग्रोहा के विनाश का कारण बना वह सिकंदर से मिल गया। तमाम राज्य सम्बंधी भेद तथा आवश्यक जानकारियाँ सिकंदर तक पहुंचा दीं।

अंत भयानक हुआ।

न अग्रोहा ही उस तूफान रूपी घात से वच सका और ना ही गोकुलचंद।

३२७ ईस्ती पूर्व के पश्चात आक्रमण के परिणाम स्वरूप अग्रोहा आज भी नष्ट भ्रष्ट पड़ा हुआ है।

उसके एक एक पत्थर आज भी चीख चीखकर हजारों वर्ष से प्रत्येक भारतवासी व प्रमुख रूप से अग्रवंश के अनुकरण करने वालों का बताते आ रहे हैं और बताते रहेंगे।

## हमारा कर्त्तव्य

अग्रोहा का एक विशाल भाग एक रुपया व एक ईंट के सहयोग से बना था। क्या आज हम सब अग्रवाल भाई संयुक्तरूप से मिलकर अपने पुनीत पूर्वजों की मुख्य भूमि को फिर जीवित नहीं कर सकते ह।

हम भाग्यवान हैं कि भग्नावेश के रूप में हम उस स्थान को आसानी से बिना खोजे स्वयं देख सकते हैं। पत्थरों व भग्नावेषों को पहचान सकते हैं।



## एक आवाहन

हम आवाहन करते हैं अग्रवंश के अनुयायिओं को कि वे सब एक जुट होकर संकल्प करें कि हमें अग्रोहा का निर्माण एक पितृ भूमि, तीर्थ स्थान के रूप में करना है।

हम मिलकर अग्रोहा के जीर्ण शीर्ण रूप को एक अत्यन्त रमणीय व भव्य रूप में परिवर्तित कर दें जिससे हम अग्रवंश के उपासक वहां यदाकदा जाकर अभिमान महसूस कर सकें अग्रोहा की रज को अपने मस्तिष्क से लगाकर गर्व सहित प्रणाम कर सकें, धन्य है अग्रोहा की पुण्य भूमि जहाँ अग्रवंश के अनेकानेक महान व्यक्तियों ने जन्म लिया, युवावास्था को प्राप्त हुए व महान जनहित के कर्त्तव्य करते हुए सद्गति को प्राप्त हुए।

## महाराज अग्रसेन वंशज

महाराज अग्रसेन के १८ पुत्रों के राजकन्याओं व नागकन्याओं से अनेक पुत्र व पुत्रियां उत्पन्न हुई।

राजकन्याओं से कुल ३३ पुत्र तथा २८ पुत्रियां उत्पन्न हुईं।

नागकन्याओं से कुल ५० पुत्र तथा ४८ पुत्रियाँ उत्पन्न हुईं।

पृथक वंश सूची पुस्तक के अंत में दी गई हैं।

## अग्रवंश का वैश्यवर्ण में परिवर्तन

महाराज अग्रवंश के कुल ८३ पुत्र थे।

८३ पुत्र एक विशाल परिवार का रूप था। उस समय के रीति के अनुसार प्रायः ज्येष्ठ पुत्र ही राज्य का अधिकारी होता था।

इसके साथ ही यह बात भी सत्य है कि प्रत्येक पुत्र राज्य अधिकारी नहीं हो सकता है अतएवं अनेक पुत्र तथा उनके वंशजों ने

कलांतर में बहुत से राज्य कार्य से दूर होते गए और आवश्यकतानुसार व्यापार, वाणिज्य कृषि, शिल्पकारी, वेद विद्या पाठी आदि अनेक कार्यों में प्रविष्ठ होते गए।

आधुनिक युग में अनेक अग्रवंशज विभिन्न व्यापार में जुटे स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं। नागवँशी तथा राजवंशी सन्ताने वैश्य के रूप में विख्यात होती रही। हमारे विचार से बैश्य शब्द 'विश' शब्द का अपभ्रंश ही है।

## वर्ण स्थगन

महाराज अग्रसेन युग के २४५३ वर्ष पश्चात महाभारत का महायुद्ध प्रारम्भ हुआ।

इस युद्ध के अत्यन्त विनाशकारी परिणाम हुये। अनेक विद्वान, योद्धा, ज्ञानी, ध्यानि लोग काल के ग्रास में समा गए।

ज्ञान का लोप हो गया। जाति गुण, कर्म, स्वभाव सब लुप्त हो गये। भारत के इतिहास में सम्भवतः इससे अधिक विनाशकारी समय—इससे पूर्व नहीं आया था।

इस युद्ध के परिणाम स्वरूप महाराजा अग्रसेन के वंशज जिस-जिस वर्ण में थे, वहीं स्थगित रह गये। जो परिवार जिस वर्ण में थे, उसी वर्ण में ही स्थिर रूप से प्रसिद्ध होते गये।

अविद्या के अन्त्रकार के कारण सहस्त्रों शाखा व उपशाखायें पनपती रहीं। अनेक अग्रवंश से सम्बंधित व्यक्तियों ने नामकरण के पश्चात देश व व्यक्ति विशेष अथवा मत ही जोड़ दिये।

देश व व्यक्ति विशेष के उदाहरण का स्वरूप हम अनेक व्यक्तियों के नाम के पश्चात इस प्रकार के शब्द जुड़े देखते हैं। उदाहरणतया



देहलवी, रामपुरी, ओरंगावादी, नरवानिया, टोहानवी, आदि आदि।

करीब ६० वर्ष पूर्व भारतीय वैश्य महासभा ने जांच के अनुसार वैश्य वर्ण की शाखा, प्रति शाखा की खोज की थी।

विस्तृत खोज के पश्चात उक्त सभा ने वैश्य वर्ण की ४२ जातियां ढूंढी थीं, उन्होंने अपने अंवेषण के पश्चात घोषणा की थी कि निम्नलिखित ४२ वैश्य उपशाखायें अग्रवंश की शाखा प्रतिशाखा का रूप है। हो सकता है कि कुछ इसका अपवाद भी हों। उनके नाम निम्न हैं :

(१) अग्रवाल बीसे।
(२) अग्रवाल दस्से, कदीमी व आदि अग्रबाल।
(३) राजवंशी
(४) वरनवाल
(५) गिन्दौडिया अथवा गांधारिया
(६) चुरूवाल
(७) श्रीसाल
(८) शहराविक
(९) महेश्वरी
(१०) खण्डेलवाल
(११) बीजावरगी
(१२) ओसवाल
(१३) नागर
(१४) वारहसेनी
(१५) माहौर
(१६) रस्तोगी
(१७) माथुर
(१८) घोडी
१९) गुजराती
(२०) ढाकेर
(२१) मीरनवाल
(२२) कोलवार महेश्वरी
(२३) जागडे पोरवाल
(२४) भाजेरवाल
(२५) भटोरिए
(२६) मुरचतुर्वेदी
(२७) पल्लीवाल
(२८) जैनी
(२९) लोहानिए
(३०) कारवने

(३१) पोकरे महेश्वरी
(३२) टोंकवाल महेश्वरी
(३३) नडीमें
(३४) नरसिंह पुरिए
(३५) कठोरा
(३६) गोहले
(३७) पोरवाल
(३८) पदमावति पोरवाल
(३९) जेती व सोरे
(४०) देंडूमहेश्वरी
(४१) महाजन
(४२) दस्से या अलग किए हुए।

## बीसा व दशा विचार विमर्श

वर्तमान अग्रवाल समाज में हम किसी भी अग्रवाल से उसका गोत्र का परिचय पूछते समय यकायक पूछ बैठते हैं कि अमुक 'वीसा अग्रवाल तो है।'

## वीसा अग्रवाल क्या है ?

पूर्व परिचय अनुसार हम कह चुके हैं कि महाराज अग्रसेन ने अपनी पुत्र वधुओं की राजकन्याओं व नागराजा वासकी की पुत्रियों की संतानों को राजवंशी तथा नागवंशी की पदवी की विशिष्टता से अलंकृत किया था।

यह 'विशिष्टता' ही हमारे विचार से 'बीसा' शब्द का पूर्व रूप है।

कालान्तर में हमारे पूर्वज राजवंशी तथा नागवंशी की विशिष्टता युक्त पदवियां भूल बैठे और 'वीसा' शब्द का उच्चारण करने लगे।

## दस्सा वर्णन

महाभारत के पश्चात घोर कलयुग का भयंकर अन्धकार युक्त काल आया। हमारे पूर्वज बात बात पर जाति पदच्यूत, व जाति



भेद करने लगे।

हमारे विचार से यह जाति भेद या जाति से पृथक करने का रूप ही दस्सा बन गया।

उदाहरणतया किसी को पदच्युत अथवा जाति से पृथक करने के रूप में 'वीसा' से 'दसा' बन गया।

## अज्ञान अंधकार

अविद्या व ज्ञान के अंधकार ने हमें यहां तक पीछे की ओर धकेला कि हमारे पूर्वजों ने खान, पान, रोटी, बेटी का सम्बंध ही निषेध कर दिया।

इस रोटी बेटी के सम्बंधों के विषय में हमें अपने पूज्य पिता जी के एक स्वर्गीय मित्र श्री सत्यदेव जी गुप्ता की याद ताजा हो जाती है।

यह बात आज से २० वर्ष पूर्व की है।

श्री सत्यदेव जी हमारे सम्मुख पिता जी का परिचय अपने एक अन्य बिरादरी के सज्जन को दे रहे थे। यहां यह कहना असंगत न होगा कि वे कन्नौज के रहने वाले थे और सम्भवतः उनके हृदय में ऊँच नीच का भाव अधिक था।

वह कह रहे थे कि हमारे मित्र श्री रमेशचंद्र जी जाति के अग्रवाल गर्ग हैं। बड़े ही सज्जन है, विशाल हृदय हैं। हमारे यहां कच्ची रोटी भी खा लेते हैं।

मैं पास ही बैठा सुन रहा था, मैं आश्चर्यचकित था कि अग्रवाल गर्ग व जाति का विशाल हृदय व रोटी खाने से क्या 'सम्बन्ध' है।

इस 'सम्बंध' का भी मुझे शीघ्र पता चल गया। जो कि हमारे

वैश्य समाज की अधोगति के रूप में विराजमान था।

इस जात, पात, बिरादरी, ऊंच, नीच के विचारों ने करोड़ों हिन्दूओं को अपने धर्म से विमुख कर दिया।

यह एक विस्तृत विषय है जिसकी यहां व्याख्या तर्क संगत नहीं है।

## वर्ण भेद

वैश्य धर्म के विषय में अनेकानेक मत हैं। हमारे शास्त्रों के अनुसार जातियां ४ भागों में विभिक्त थीं :

[१] ब्राह्मण
[२] क्षत्री
[३] वैश्य
[४] शूद्र

महाराजा अगसेन अथवा उनके पूर्वजों के विषय में विचार करना अत्यन्त आवश्यक है। उपरोक्त ४ वर्णों में से उनका कौन सा वर्ण था।

वर्ण भेद करने के लिए हम उपरोक्त ४ वर्णों में से विचार करें कि महाराजा अग्रसेन, उनके पूर्वज अथवा उनकी संतान आदि किस वर्ग में आ सकते हैं।

उचित है कि हम चौथे वर्ण से आरम्भ करें।

अग्रवंश का वर्ण क्रमांक के अनुसार क्षूद्र वंश से कोई सम्बंध न कभी था, न वर्तमान में है।

वर्ण क्रमांक ३ है। वर्तमान युग में अधिकतर अग्रवाल व्यापार, उद्योगिक संस्थान, दुकानदारी में व्यस्त हैं। अतएव अग्रवाल अपने



आपको वैश्य कहते हैं।

अब एक ज्वलंत प्रश्न हमारे सम्मुख उठता है कि क्या महाराजा अग्रसेन व्यापारी थे।

इसका उत्तर हम स्वयं जानते हैं। वे एक राजा थे।

राजा भी साधारण नहीं, अपितु आर्यवर्त के प्रसिद्ध राजा थे जिन्होंने पूरे ६१ वर्ष भारत भूमि के एक विशाल भूखण्ड पर राज्य किया।

जिनके अन्तर्गत अनेक राज्य थे। उनसे अनेक राजाओं ने संधियां कर रखी थीं।

अतएव क्या महाराज अग्रसेन 'क्षत्री' थे।

अग्रपुराण, भागवत पुराण व आदि ग्रंथों में महाराजा अग्रसेन का उल्लेख 'क्षत्रिय कुल भूषण महाराजा अग्रसेन' के रूप से संबोधित किया गया है।

वस्तुत: आदि काल में वर्ण भेद का माप दण्ड कर्म था।

कर्म ही के अनुसार वर्ण भेद मर्यादा स्थापित की जाती थी।

वर्तमान युग में भी क्या एक ब्राह्मण-पुत्र जो अनपढ़ हो, वेद मंत्र न जानता हो। तिथि पत्रिका के मामले में निरक्षर भट्टाचार्य हो तो क्या वह ब्राह्मण-कृत्य कर सकता है।

क्या हम उससे विवाह संस्कार की पवित्र वेदी पर बिठाना अथवा गुरु का पद देना स्वीकार करेंगे।

इसका केवल एक उत्तर है नहीं, कदापि नहीं।

आज के युग में अनेक हरिजन न्यायाधीश व अन्य उच्च पदों पर विराजमान है। क्या वह विद्वान उच्च पद के अधिकारी नहीं हैं।

अग्रवंश का आदिकाल का इतिहास राज्य सम्बन्धी इतिहास

रहा है अतएव इस बात का उत्तर उपरोक्त ही हो सकता है।

जैसा पूर्व कहा जा चुका है। महाभारत काल के पश्चात वर्ण मर्यादा बिलकुल स्थगित हो गई थी, जो जिस वर्ण में सम्मलित था उसकी वही जाति तथा बिरादरी बन गई।

चूंकि महाभारत काल के पश्चात भारत के दुर्दिन आये। भारत का इतिहास बुरी तरह करवट बदलता रहा। अतएव कुछ ही अग्र-काल के वंशज राज्य कार्य में लिप्त रहे।

अन्य व्यापार, कृषि, शिक्षा क्षेत्र आदि में जुट गए।

अतएव यह कहना उचित नहीं है कि अग्र वंशज राजा नहीं बन सकते थे अथवा राज्य धर्म केवल क्षत्री वंशजों से संबन्धित है और अग्रवाल हैं वैश्य। अतएव महाराजा पुरुषोत्तम रामचन्द्र अथवा भरत आदि महान राजा हमारे वंश से संबन्धित नहीं हैं।

इस प्रश्न को हमने इस स्थान पर इसलिए समालोचनार्थ रखा था, क्योंकि अग्र पृष्ठों में भारत के अनेक महापुरुषों सम्बन्धी व्याख्या करने जा रहे हैं जो कि स्पष्ट अग्र-वंश से संबन्धित हैं और हम अग्र-वंशी इस सत्य को अनजाने स्वीकार करने में अनावश्यक रूप से कतराते रहते हैं।

## महाराजा अग्रसेन सन्तान सम्बन्धी काल, व्याख्या व उपलब्धि

महाराजा अग्रसेन के १८ पुत्रों की राजवंशी व नागवंशी रानियों से अनेक पुत्र तथा पुत्रियां हुईं।

उनके वंशज का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है। हमने अकथनीय परिश्रम किया, परन्तु पूर्ण इतिहास उपलब्ध नहीं होता है।



हमने कन्सयुद्ध, अग्रपुराण, भागवत, चित्रक्रम, वंशावली राजा मान मोरी, जोकि उदयपुर चित्तौडगढ़ के राजा के पास आज तक सुरक्षित हैं। अरली हिस्ट्री आफ इंडिया, इंडियन एण्ड दी वेस्ट्रन वर्ल्ड, प्राचीन सभ्यता का इतिहास, अनेक उपलब्ध धर्म ग्रंथ, हस्त-लिखित अग्रपुराण, तथा कुछ विद्या-शास्त्री जिन्होंने अग्र-वंश के इतिहास संबन्धी गन्वेषण किया है उनसे जानकारी उपलब्ध की है।

कुछ ग्रन्थों की उपादेयता हमें स्वीकार नहीं है। इसके विषय में हम अधिक कुछ भी कहने में असमर्थ हैं।

अग्रसेन वंशावली में पूर्ण नाम की उपलब्धि नहीं होती है। अतएव जो भी खोज में मिल चुके हैं अथवा हमारी समझ के अनुसार प्राचीन पुस्तकों में उपलब्ध है, हम दे रहे हैं।

केवल एक कठिनाई पाठकों को पड़ेगी, जो हमारे संमुख आई थी। क्योंकि प्रयुक्त वंशजों के नामों में अनेकानेक वर्षों का अन्तर है। अतएव स्पष्ट काल व समय लिखने से असमर्थ हैं।

## संतान परिचय

### कुंवर विशपदेव (गुलाब देव)

कुंवर विशपदेव महाराजा अग्रसेन के सबसे ज्येष्ठ पुत्र थे।

महाराज अग्रसेन के स्वर्गारोहण के पश्चात आप ही राज्य सिंहासन पर उत्तराधिकारी के रूप में बैठे थे। इनके राजवंशी पत्नी के चार पुत्र तथा दो पुत्रियां हुईं।

नागवंशी पत्नी के चार पुत्र चार पुत्रियां हुईं।

विशपदेव अधिक आयु को प्राप्त नहीं हुए। वे युवावस्था में ही

काल का ग्रास बन गये और स्वर्ग सिधार गए।

विशप देव के स्वर्गवास के पश्चात उनके राजवंशी पत्नि पोबंद्रा से उत्पन्न हुए सबसे बड़े पुत्र अन्तामल ने राज्य सिंहासन उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त किया।

अन्तामल के कुल में अनेक वर्षो के पश्चात महाभारत काल में समकालीन रनवीर जीत उत्पन्न हुआ था।

रनवीर जीत और मथुरा के राजा कंस का आर्य सम्वत् १९७२९४४०२५ में युद्ध हुआ [कंस युद्ध, अग्रपुराण]।

युद्ध परिणाम के स्वरूप रनवीरजीत मारा गया।

रनवीर जीत के पश्चात उसके कुल में वेरीभामल का पोत्र प्रणवंद्र अग्रोहा के राज्य सिंहासन पर विराजमान हुआ।

[२] गेंदू मल

गेंदूमल महाराज अग्रसेन के दूसरे पुत्र थे।

इनके राजवंशी पत्नी के चार पुत्र व चार पुत्रियां हुईं और नागवंशी के चार पुत्र तथा तीन पुत्रियां हुईं।

गेंदूमल के विषय में इतिहास अधिक उपलब्ध नहीं है। अतएव अधिक विस्तृत रूप से लिखना असंभव है।

गेंदूमल के नागवंशी पत्नी तंबोल देवी से उत्पन्न हुए सबसे बड़े पुत्र वारश्व के कुटम्ब से गिन्दौडिये प्रसिद्ध हुए, इन्हीं के राजवंशी पत्नी चंद्रावती से पैदा हुए तीसरे पुत्र उमाश्वो की संतान महेश्वरी आदि ३५ विभाग उत्पन्न हुए।

इनके काल का विवरण महाकाल के विकराल स्वरूप में खोकर लुप्त प्रायः हो गया है अतएव विशेष वृतांत उपलब्ध नहीं होता है।



[३] करणचन्द्र

करणचन्द्र महाराज अग्रसेन के तीसरे पुत्र थे।

इनके राजवंशी पत्नी सिद्धवन्ती से एक पुत्र तथा एक पुत्री उत्पन्न हुई और नाग वंशी पत्नी से २ पुत्र व २ पुत्री उत्पन्न हुई।

करनचन्द्र की राजवंशी पत्नी से उत्पन्न पुत्र सिन्धुपति के वंशजों में जरासिन्ध उत्पन्न हुआ था।

जरासिन्ध ने सफलता पूर्वक मगध देश पर राज्य किया था।

इनकी राजधानी राजगढ़ (राज महल) गंगा के तट पर विद्यमान थी।

इनके राज्य की सीमा वर्तमान युग के अनुसार मगध व बिहार के क्षेत्र में पड़ती है।

सिन्धुपति के बहुत वर्षों पश्चात उनके वंशजों में सहदेव और मरजारी हुए थें।

सहदेव व मरजरी दोनों अद्भुत पराक्रमी वीर थे। वे महाभारत के युद्ध में सम्मिलित हुए थे और सफल योद्धा सिद्ध हुए थे।

जरासिन्ध के वंशजों में अंतिम राजा थे रचयें।

रचयें का वध उसके मंत्री ने कर दिया था।

रचयें को मारकर वह स्वयं शासन का अधिकारी बन गया था।

जरासिन्ध की उपलब्ध वंशावली पुस्तक के अन्त में दी है।

[४] मणिपाल (कानकुन्द)

मणिपाल के राजवंशी पत्नी से दो पुत्र तथा एक पुत्री उत्पन्न हुई और नाग वंशी पत्नी से दो पुत्र तथा दो पुत्रियाँ उत्पन्न हुईं।

मणिपाल की राजवंशी पत्नी से उत्पन्न छोटा पुत्र था मोरा मल।

मोरामल के वंशज मोर अथवा मोर्य के नाम से विख्यात हुए।

ईसा से ३२२ वर्ष पूर्व इन्हीं के वंशजों में प्रसिद्ध राजा चन्द्रगुप्त मोर्य उत्पन्न हुए।

चन्द्रगुप्त मोर्य का नाम हिन्दू जाति में विख्यात सम्राट के रूप में लिया जाता है। इन्होंने गुप्त वंश की स्थापना की थी और इन के वंशजों ने ईसा पूर्व ३२२ से ईसा पूर्व १८५ तक राज्य किया था।

इस प्रकार १३८ वर्ष तक इनके वंशजों ने आधुनिक युग के उपलब्ध इतिहास के अनुसार राज्य किया था।

चन्द्रगुप्त मोर्य एक अत्यन्त प्रतापी, महान, योग्य, साहसी, पराक्रमी व न्यायप्रिय राजा था।

महाराजा अग्रसेन तथा महाभारत काल के पश्चात भारत के इतिहास में यह सर्वप्रथम अवसर था जब चन्द्रगुप्त ने विदेशियों को भारत से खदेड़ कर ब्रह्मपुत्र से लेकर हिन्दकुश तक और हिमालय से लेकर दूर दक्षिण तक अपना आधिपत्य का विस्तार किया।

चन्द्रगुप्त के पश्चात इनके वंशज बिन्दुसार, महाराजा अशोक आदि सहित पांच छः अन्य शासक हुए।

पुराणों के अनुसार गुप्त वंश का अन्तिम शासक बृहद्रथ थे। जिनका वध उसके सेनापति पुष्यमित्र शुंग ने करके भारत में शुंग वंश की नींव रखी थी।



## सम्राट चन्द्रगुप्त सम्बन्धी किंवदन्ती

सम्राट चन्द्रगुप्त संबंधी इतिहासकारों ने अनेक मिथ्या किंवदन्ती प्रस्तुत कर रखी हैं, जिनका उल्लेख करना यहाँ आवश्यक है।

इतिहासकारों में सम्राट चन्द्रगुप्त के प्रारम्भिक जीवन के विषय में अनेक मतभेद हैं।

इतिहासकारों के मत व अनुमान निम्न हैं—

[१] गुप्त वंश का संस्थापक चन्द्रगुप्त मोर्य सम्राट नन्द का पुत्र था। उसकी माता जाति की शूद्र थी।

[२] सम्राट चन्द्रगुप्त मगध सम्राट की सेना में कार्य करता था। किसी कारणवश उसकी राजा से न बन पाई और उसे नौकरी त्याग कर पंजाब की ओर भागना पड़ा। पंजाब में उसकी महान राजनीतिज्ञ चाणक्य से भेंट हुई। चाणक्य नन्द वंश का शत्रु था क्योंकि नन्द वंश के सम्राट ने उसका अपमान किया था। इन दोनों के संजोग मिलन ने नन्द वंश की जड़ें काटने का मार्ग प्रशस्त किया।

[३] अन्य साहित्यकारों के मत के अनुसार चन्द्रगुप्त की माता 'मुरा' थी। मुरा के नाम पर ही मौर्य वंश की स्थापना हुई।

## सत्य क्या है ?

विवाद की समालोचना निम्न है :—

[१] नन्द वंश तो महाराजा अग्रसेन के वंशजों का ही द्योतक है। अतएव इतिहासकारों की यह कल्पना मनगढंत व निरर्थक है कि चन्द्रगुप्त नन्द वंश के राजा का पुत्र था।

यदि चन्द्रगुप्त नन्द वंश के राजा का पुत्र होता तो उसे गुप्त वंश की स्थापना की आवश्यकता ही क्या थी ? नन्द वंश अपने आप में अत्यंत प्रसिद्ध वंश रहा है।

[२] इतिहासकारों की कल्पना का दूसरा रूप चन्द्रगुप्त मौर्य की माता के सम्बन्ध में है। यह बिना सिर पैर की ऊटपटांग बात है, हमारे विचार में यह भी मनघडंत तथ्य है।

[३] इतिहासकार एक स्थान पर तो नन्द वंश का पुत्र मानते हैं वहीं एक विचित्र बात कह देते हैं कि वह मगध के राजा की सेन में नौकर था और राजा से न बन पाई।

सेना में एक साधारण कार्यकर्ता का महाराज 'से न बनना' यह एक तथ्य रहित बात है। अतः हमें अस्वीकारा है।

[४] अंतिम मत के अनुसार चंद्रगुप्त की माता का नाम मुरा था। और अपनी माता के नाम पर ही उसने चंद्रगुप्त मौर्य शासन की स्थापना की।

माता के नाम पर शासन की स्थापना संबन्धी बात भी एक अनर्गल सी लगती है।

यदि चंद्रगुप्त ने अपनी माता के नाम से वंश की स्थापना की थी तो इतिहासकार चंद्रगुप्त के पुत्र को गुप्त वंश के नाम से उल्लेख क्यों करते हैं।

प्रायः वंश का प्रचलन पिता के नाम से होता है।

उदाहरणतया अग्रवाल अथवा अग्रवंश महाराज अग्रसेन के वंशज हैं अतएव यह भी भ्रम है।

## सत्य विचार

महाराज चंद्रगुप्त क्षत्रियकुल भूषण महाराज अग्रसेन के चतुर्थ पुत्र मणिपाल की राजवंशी पत्नि के छोटे पुत्र मोरामल की संतान [मौर्य वंश] में उत्पन्न हुआ था।



हमारा कथन मनघडंत काल्पनिक नहीं है।

उदयपुर चित्तोड़गढ के 'रायों' के पास उपरोक्त वंशावली सुरक्षित है।

चित्तोड़गढ के रायों में एक विख्यात राजा मानमोरी चंद्रगुप्त के वंशज थे और उस वंशावली के अनुसार राजा मान मोरी महाराज अग्रसेन के पौत्र मोरामल के वंशज थे।

अतएव 'अरली हिस्ट्री आफ इंडिया' पृष्ठ ४३ में 'होलसाब का उल्लेख कि चंद्रगुप्त की माता महाराज के मयूरों के रखवाले की कन्या थी एक अनर्गल तथ्य है।

संसिस्टस्मिथ भी एक विख्यात इतिहासकार हो चुका है। उसने सिद्ध करने का यत्न किया था कि चंद्रगुप्त मौर्य की माता, दादी या नानी का नाम मोरा था।

प्रथम तो विश्व इतिहास में कोई भी राज्य परिवार माता, दादी या नानी के नाम से आज तक प्रसिद्ध नहीं हुआ है।

द्वितीय माता, दादी या नानी तीन वंशजों का प्रतीक है। तीनों के परिवार व गोत्र पृथक ही होते हैं।

अतः इतिहासकारों का प्रयास अंधेरे में मोती पिरोने वाली बात ही है।

अतः विश्व प्रसिद्ध महाराज चंद्रगुप्त क्षत्रियकुल भूषण महाराज अग्रसेन के पौत्र मोरामल के वंशज थे।

नाम के पश्चात 'गुप्त' शब्द का प्रयोग व अंत में 'मोर' शब्द व बदला रूप 'मौर्य' उनके वंश परम्परा का प्रमाण है।

## महाराज चन्द्रगुप्त का राज्य काल

महाराज चंद्रगुप्त का जन्म ३२५ ईस्वी पूर्व के लगभग हुआ था।

उनका राजकाल ३२२ ईस्वी पूर्व में प्रारम्भ हुआ तथा २९४ ईस्वी पूर्व में वह मृत्यु को प्राप्त हुए।

चंद्रगुप्त का समय सिकन्दर महान के भारत से वापिसी के पश्चात ही प्रारम्भ होता है।

सिकन्दर के हमलों के कारण सीमावर्ती क्षेत्रों के राज्य दुर्बल पड़ गए थे। उनकी सैन्य शक्ति अत्यन्त क्षीण पड़ चुकी थीं।

सिकन्दर भारत में कुल १९ माह रहा परन्तु १९ माह में उसने तोड़ फोड़ काफी की।

सिकन्दर ने वापिस जाते समय अपने विजयी क्षेत्र राजा पोरस, राजा आंभी व गवर्नर फिलिप्स को दे दिये गए थे।

सिकन्दर के आक्रमण व उसकी वापिसी चंद्रगुप्त के लिए वरदान का रूप सिद्ध हुई और कुछ ही वर्षों में वह उन्नति की ओर अग्रसित होता हुआ भारत के विशाल भूखण्ड का निर्विवाद सम्राट बन गया।

सिकन्दर यूनान देश का सम्राट था, चन्द्रगुप्त ने उस युग में विदेशी जानकारी का लाभ उठाया।

भारत व योरुप के व्यापार का उसने पूर्ण लाभ उठाया, यूनानी विद्वानों से ज्योतिष विद्या, मूर्तिकला व अच्छे सिक्के बनाने का भी ज्ञान प्राप्त किया। कुछ यूनानियों को हिन्दू धर्म की दिक्षा भी देकर चन्द्रगुप्त ने उनको हिन्दू धर्म में मिला लिया।

चंद्रगुप्त ने अपने शासन काल में मगध के राजा नंद को हराकर उसका विशाल साम्राज्य अपने अधिकार में मिला लिया।



यूनानी सेना को नष्ट करके पंजाब पर अधिकार जमाया, पंजाब के पश्चात मगध व विहार पर विजय पताका लहराई।

उत्तरी भारत के विशाल क्षेत्र पर राज्य स्थापित करके, सौराष्ट्र, मालवा, सिन्धु प्रदेश पर भी अधिकार कर लिया।

इस प्रकार चंद्रगुप्त की राज्य सीमा का विस्तार हिन्दुकुश पर्वत तक, हिमालय से नर्वदा तक सारे उत्तरी भारत पर शीघ्र ही फैल गया।

## विदेश से वैवाहिक सम्बन्ध

सिकंदर का एक सेनापति सेल्यूक्स निकेटोर था।

सेल्यूक्स निकेटोर का अर्थ यूनानी भाषा में विजेता का प्रतीक है।

सेल्यूक्स सिकंदर का सबसे सफल सेनापति था। वह सिकंदर की मृत्यु के पश्चात भी भारत पर आधिपत्य जमाने के स्वपन ले रहा था।

सिकंदर की मृत्यु के पश्चात वह सिकंदर के राज्य के एशिया वाले भू भाग बेबीलोनिया, बाख्तरिया और अफगानिस्तान पर आधिपत्य किये बैठा था।

३०५ ई० पू० में उसने सिन्ध नदी को पार करके भारतवर्ष पर आक्रमण किया।

चंद्रगुप्त ने उसको बुरी तरह परास्त किया।

हारने के पश्चात सेल्यूक्स चंद्रगुप्त से इतना अधिक प्रभावित हुआ कि अपनी नव यौवना सुन्दरी पुत्री का विवाह चंद्रगुप्त से कर दिया।

विवाहोपहार के रूप में सेल्यूक्स ने चंद्रगुप्त को काबुल, कंधार, हरात और बिलोचिस्तान के प्रदेश दिये और अपने दरबार का एक विशिष्ट राजदूत मैगस्थनीज को चंद्रगुप्त के दरबार में भेजा।

चंद्रगुप्त ने भी अपने स्वसुर का स्वागत करते हुए ५०० हाथी भेंट किए।

महाराज चंद्रगुप्त सम्बंधी अन्य सफलतायें ऐतिहासिक महत्व की हैं।

अग्रवंश का इतिहास लिखते समय हम केवल यह कह सकते हैं कि चंद्रगुप्त एक महान योद्धा, विद्वान व सफल सम्राट था। जिसने आज से करीब २००० वर्ष पूर्व अग्रवंश के सम्मान में चार चांद लगा दिये थे। और भारत में एक हिन्दू शक्तिशाली साम्राज्य की नींव रखी थी।

## बिन्दूसार

बिन्दूसार अपने पिता चंद्रगुप्त के स्वर्गारोहण के पश्चात राज-गद्दी पर बैठा।

वह अपने पिता के समान महान विजेता था। उसने दक्षिण भारत के अनेक भागों पर विजय प्राप्त की तथा अपने पिता के राज्य का विस्तार किया।

उसने विदेशियों से 'मित्र घात' की विशिष्ट उपाधि भी प्राप्त की थी।

बिन्दूसार ने अपने जीवन काल में अशोक को तक्षशिला, तथा उज्जैन का गर्वनर बनाया था।

गर्वनर के रूप में अशोक ने अपने प्रबंध व चातुर्य का सिक्का



जमा दिया था। यही उसकी भविष्यत सफलता का प्रतीक था।

बिन्दूसार ने २५ वर्ष तक राज्य किया और २७३ ई.पू० उसकी मृत्यु हुई।

## महाराज अशोक

गुप्त वंश के तीसरे व प्रसिद्ध राजा महाराज अशोक हुए।

महाराज अशोक का राज्याभिषेक अपने पिता बिन्दूसार की मृत्यु के चार वर्ष पश्चात हुआ। उनका राज्य काल २७३ ई. पू० से प्रारम्भ हुआ तथा २३२ ई. पू० मृत्यु हुई, इस प्रकार ४० वर्ष उन्होंने राज्य किया।

बौद्ध ग्रन्थों के अनुसार महाराज बिन्दूसार के ९९ पुत्र थे इस-लिए महाराज अशोक को भाईयों की एक बड़ी संख्या से राज गद्दी प्राप्त करने के लिए संघर्ष करना पड़ा।

प्रसिद्ध इतिहासकार त्रिपाठी व वी. ए. स्मिथ इस बात से सह-मत नहीं ह।

उपरोक्त साहित्कारों के अनुसार अशोक का व्यवहार अपने भाईयों से बहुत प्रिय था। उनके अनुसार सम्भवतः चार वर्ष का समय अपने बड़े भाई सुषिम से अशोक युद्ध को करने में बीते हों।

## कलिंग युद्ध

अपने शासन काल के तेरहवें वर्ष महाराजा अशोक का ध्यान कलिंग (उड़ीसा) के प्रदेश जो बंगाल की खाड़ी के तट के साथ महानदी व गोदवरी के मध्य स्थित था उस ओर गया।

यह प्रदेश अशोक के शासन में सम्मिलित नहीं था।

२६१ ई. पू० महाराज अशोक ने एक विशाल सेना सहित इस भू-भाग पर आक्रमण कर दिया।

एक अत्यन्त भयंकर युद्ध हुआ। रक्त की नदियाँ बह गईं। एक लाख व्यक्तियों की हत्या हुई। डेढ़ लाख निर्दोष व्यक्ति पकड़ कर जेल के सींकचों में कैद कर दिये गए और इनसे भी कई गुना अधिक अनेक बिमारियों के फलस्वरूप मृत्यु को प्राप्त हुये।

## कलिंग युद्ध का परिणाम

रक्तपात ने अशोक के हृदय व मानसिक दशा पर अत्यन्त गहरा प्रभाव डाला।

पश्चातापस्वरूप उसने राज्य मार्ग ही बदल डाला। राज्यनीति में शान्ति को प्राथमिकता देनी प्रारम्भ कर दी।

प्रसिद्ध इतिहासकार डा० राय चौधरी के अनुसार कलिंग के युद्ध व अशोक के जीवन परिवर्तन ने भारतीय तथा पूर्वी दुनियां के इतिहास पर विचित्र परिवर्तन की दिशा दी।

अशोक की मनोदशा आक्रमण, शिकार, मांस भक्षण, राजरंग व ऐश्वर्य की दुनियाँ से दूर होती गई।

संसारिक नाच, रास व रंग का स्थान लोक कल्याण ने ले लिया।

## अशोक का बुद्ध धर्म में प्रवेश

अशोक के बुद्ध धर्म में दीक्षा तथा उसमें प्रवेश सम्बन्धी एक गाथा प्रसिद्ध है।

एक दिवस महाराजा अशोक ने देखा कि एक बौद्ध भिक्षु अत्यन्त शान्त स्वभाव सहित चुपचाप चला जा रहा था।

उस समय महाराजा अशोक का ध्यान उन बड़े-बड़े पेटार्थी साधु ब्राह्मणों की ओर गया जो भिक्षा की ओर अग्रसर रहते हैं।



खाते-खाते भी आपस में कलह करते रहते हैं।

महाराजा अशोक ने कुछ विद्वान बौद्ध भिक्षुओं व विद्वानों को निमन्त्रित किया।

निकटता से बातचीत व विचार विमर्श किया।

बातचीत, उनके जीवन यापन, भिक्षा की सरलता आदि ने महाराजा अशोक के हृदय पर अत्यन्त सुन्दर प्रभाव डाला।

इसके विपरीत महाराजा अशोक को आचरण हीन, सण्ड-मुसण्डे साधु, ब्राह्मणों से घृणा सी होने लगी।

इस मनोदशा के फलस्वरूप महाराजा अशोक बुद्ध धर्म की ओर अग्रसित होने लगे और बुद्ध धर्म में प्रवेश कर लिया।

महाराजा अशोक के युग में बौद्ध धर्म का भारत में ही नहीं विदेशों में भी प्रचार हुआ।

प्रसिद्ध इतिहासकार विद्वान भावरू व डा० त्रिपाठी ने महाराजा अशोक के विषय में लिखा है कि उनकी महानता इस बात में थी कि स्वयं उन्हें भगवान बुद्ध की शिक्षाओं पर विश्वास था परन्तु उन्होंने अपना व्यक्तिगत धर्म प्रजा पर थोपने का यत्न कभी नहीं किया।

अशोक ने वस्तुतः संसार के सम्मुख सब धर्मों का निचोड़ अथवा सार रखा।

उन्होंने अनेक शिलालेख लिखवाए जिनपर बौद्ध धर्म की शिक्षाओं व अपने विश्वास को अंकित किया।

अशोक के अनुसार सच्चे धर्म व श्रेष्ठ मनुष्य कर्म की निम्न परिभाषायें थीं।

(१) बड़ों के प्रति आदर—बड़ों का आदर पालन करना

चाहिए।

(२) छोटे के प्रति व्यवहार—बड़ों को भी चाहिए छोटों के साथ यथोचित प्रेम व्यवहार करें। दया करें।

(३) पशु पक्षी पर प्रेम—मनुष्य को मनुष्य के साथ ही नहीं अपितु पशु पक्षियों से भी अच्छा व्यवहार करना चाहिए। उनको कष्ट नहीं देना चाहिए।

(४) धर्म सहनशीलता—मनुष्य को अपने धर्म के आदर के साथ अन्य धर्मों का अनादर नहीं करना चाहिए।

(५) सत्य प्रेम—प्रत्येक व्यक्ति को सत्य बोलना चाहिए। आडम्बर पूर्ण भक्ति की अपेक्षा सत्य रत्न श्रेष्ठ है।

(६) दान वीरता—निर्धन को धन दान, मूर्ख व्यक्तियों को शिक्षा दान, भूले भटकों को धर्म दान श्रेष्ठ कार्य है।

(७) सत्य रीति-रिवाज—जादू टोने, कुरीतियों, पाखण्ड का त्याग करना और धर्मानुसार नियम पालन करना व सत्य रीति-रिवाज पालन करना, मनुष्य का श्रेष्ठ धर्म है।

(८) शुद्ध जीवन—पाप का त्याग करना, क्रोध, निर्दयता, अभिमान और ईर्ष्या मनुष्य का जीवन अशुद्ध, मलीन व दुर्गुणता पूर्ण बनाते हैं।

अशोक का व्यक्तित्व महान से महानतम बनता गया। उसने विदेशों में अपना पुत्र महेन्द्र और पुत्री संघमित्रा को बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए भेजा।

इन प्रचारों के फलस्वरूप बौद्ध धर्म का विस्तार हिमालय की तराई, श्री लंका, ब्रह्मा, सीरिया, मिस्र, यूनान और मध्य दुनियाँ आदि अनेक विदेशों में बौद्ध धर्म के प्रचार में अपूर्व सफलता



प्राप्त की।

आधुनिक काल में भी चीन, ब्रह्मा, तिब्बत, जापान, लंका, स्याम और पूर्वी द्वीप समूहों में बौद्ध धर्म के अनुयायियों की संख्या प्रर्याप्त मात्रा में विद्यमान है।

अशोक ने शिलालेख, स्तम्भ, गुफा, द्वारों पर बौद्ध धर्म के विषय में जानकारी दी।

वर्तमान भारत का राज्य चिन्ह 'अशोक चक्र' अथवा शेर के मुख के नीचे चक्र चिन्ह महाराजा अशोक की देन है।

अशोक चक्र के रूप में भारत का सरकारी चिन्ह अनेक वर्षों तक अशोक महान की विशालता, वैभवता व उच्च राज्य काल का स्मरण सदैव कराता रहेगा।

महाराजा अशोक के पश्चात् ५० वर्ष के अन्दर ही विशाल गुप्त साम्राज्य का रूप लघुत्तर होता गया। अन्तिम शासक बृहद्रथ का दूसरे सेनापति पुष्यमित्र ने बध कर दिया और इस प्रकार इस साम्राज्य का विशाल रूप क्षीण होता गया।

## गुप्त अथवा मौर्य वंश की वंशावली

| विष्णु पुराण | वायु पुराण | भागवत पुराण | शासन काल |
|---|---|---|---|
| चन्द्रगुप्त | चन्द्रगुप्त | चन्द्रगुप्त | २४ वर्ष |
| बिन्दुसार | बिन्दुसार | बारीसार | २५ ,, |
| अशोक वर्धन | अशोक | अशोकवर्धन | ३६ ,, |
| स्वेशा | कश्मल (कनाल) | सुयाशा | ८ ,, |
| दशरथ | दशरथ | दशरथ | ८ ,, |
| संगन्त | इन्द्रपालित | संगत | १० ,, |

| | | | |
|---|---|---|---|
| शालिश | शालिश | शालिश | १ ,, |
| सोमशर्म्मा | देवशर्म्मा | सोम शर्म्मा | ७ ,, |
| शतधन्वा | शतधर | शतबन्धु | ८ ,, |
| बृहद्रथ | बृहदविश्व | बृहदविश्व | ८ ,, |

बृहद्रथ के पश्चात गुप्त वंश के राजा बिखर गये।

गुप्त वंश के शासकों का छोटे-छोटे राजाओं के रूप में ८वीं शताब्दी तक शासन रहा।

श्री वस्डस्मिथ, वर्म्मा नामक राजा के एक लेख के प्रतिस्वरूप तथा प्रसिद्ध चीनी यात्री, हयुंगसांग के समकालीन वर्णन से सिद्ध होता है कि मौर्य अथवा गुप्तवंश के राजे सातवीं आठवीं शताब्दी तक मगध के आसपास के प्रान्तों पर शासन करते थे।

राजस्थान में कोटा से ५ किलोमीटर की दूरी पर केसवाशिव के मन्दिर में एक शिलालेख स्थित है।

उस शिलालेख पर मौर्य वंश के राजा धवल का नाम लिखा है। यह शिलालेख ७३८ विक्रमी का है।

मौर्य वंश का राज्य चितोरगढ़ में ८वीं शताब्दी के दौरान भी रहा। इस वंश के राजा झेरी ने चितोड़गढ़ पर राज्य किया।

मौर्य वंश के अनेक जागीरदार आज भी भारतवर्ष में विद्यमान हैं।

## राजा श्याम चरण मौर्य

विक्रमी सम्वत ५७ में श्यामचरण मौर्य का शासन मुर्गेर में था। यह विलासी तथा कामी प्रकृति का व्यक्ति था। सुख व आराममय जीवन अधिक प्रिय था।



## (५) बलन्दा

महाराजा अग्रसेन के पांचवें पुत्र थे। इनका जन्म राजवंशी रानी से हुआ था। इनके छह पुत्र और चार पुत्रियां उत्पन्न हुई।

आपके नाम पर महाराजा अग्रसेन ने बलन्द शहिर बसाया था जो आज भी उ० प्र० मे बुलन्दशहर के नाम से प्रसिद्ध है।

राजवशी पत्नी से उत्पन्न तीसरे पुत्र सूर्यभान की सन्तानों का उल्लेख पुराणों में मिलता है।

सूर्यभान के वंशजों में ३१७५ वर्ष पश्चात पटना का राजा इन्द्रदत्त हुआ। इन्द्रदत्त की उपलब्ध वंशावली की व्याख्या अन्त में दी गई है।

महाराज इन्द्रदत्त ने पटना सहित वर्तमान बिहार प्रदेश के कुछ भागों पर राज्य किया था। तथा इन्द्रवंश की स्थापना की थी।

महाराजा इन्द्रदत्त के वंशजों में अनेक वर्षों पश्चात प्रेमकमार और उनके भ्राता देगंल कुमार हुए। वे विद्वान तथा वैदिक धर्म के अत्यन्त उपासक थे। उनके अनुयाईयों में परिमार, प्रहार देगंल और चालक जातियों की उत्पत्ति मानी गई है।

ला० रघुबीर सिंह ने अपनी पुस्तक 'जीवन चरित्र महाराज विक्रमादित्य' के पृष्ठ १५ पर भी इस बात का उल्लेख किया है तथा स्वीकार किया है कि परिमार, प्रहार और देगंल जो जाति से राजपूत कुल में आते हैं प्रेमकुमार, देगंलकुमार के अनुयाईयों से सम्बन्धित हैं।

## एक अपूर्व घटना

महाराजा प्रेमकुमार से सम्बन्धित एक अन्य घटना का पुराणों

में उल्लेख मिलता है।

भारत में जिस समय बुद्ध मत का बाहुल्य था। जनता वेद-आचरण के विरुद्ध होती जा रही थी। वेद पाँव तले रौंदे जा रहे थे। ईश्वर के नाम से विमुख होते जा रहे थे। अनार्य बन रहे थे।

वैदिक धर्मालवम्बी ब्राह्मण पंडित चिन्तित हो उठे। वेदों के स्वरूप की रक्षा की चिन्ता उन्हें सताने लगी।

उस युग में आबू पर्वत पर अंगा ऋषि जो महाराजा अग्नि कुल से सम्बन्धित थे उनके सन्मुख करुणा क्रन्दन करने लगे।

अंगा ऋषि से मार्ग दर्शन की प्रार्थना की जिससे आर्य्यवर्त में वेद तथा वैदिक धर्म सुरक्षित रह सके।

अंगा ऋषि ने ब्राह्मणों को उपदेश देते हुए कहा कि यह सब तुम्हारे बुरे अनुचित कार्य व कर्मों का परिणाम है। अतएव अपने हृदय को पवित्र करो। देश के हित के विषय में ध्यान करो।

अंगा ऋषि ने ब्राह्मणों को बताया कि उक्त युग में अग्रसेन के पांचवें पुत्र बलन्दा के वंशजों में प्रेमकुमार अयोध्या पर राज्य कर रहा है।

प्रेम कुमार ही वैदिक धर्म को पुनर्जिवित कर सकने की सामर्थ्य रखता है। वह ही वर्तमान युग में वैदिक धर्म के अनुसार आचरण कर रहा है। अतएव उससे सहायता प्राप्त करें।

ब्राह्मण व अन्य धर्मानुयायी अग्रोहा प्रेमकुमार की शरण में पहुंचे। और उनसे वेद भगवान तथा बुद्ध मतानुयायियों से रक्षा करने की प्रार्थना की।

उन्होंने महाराजा को बताया कि अंगा ऋषि से वे आशीर्वाद प्राप्त करके उनकी सेवा में आये हैं।



प्रेमकुमार ने ब्राह्मण व उपस्थित विद्वानों की बातें ध्यान-पूर्वक सुनी। अगांऋषी का आदेश हृदयागम करते हुए भ्राता दंगलकुमार सहित वैदिक धर्म की रक्षार्थ अग्रोहे से चलकर अगां ऋषि के चरणों में उपस्थित हुये।

## अग्निकुल की व्याख्या

अंगा ऋषि के आश्रम में प्रेम कुमार व देंगलकुमार की भेंट दो तेजस्वी व बलवान व्यक्तियों से हुई।

वे व्यक्ति थे तवाजल कुमार और राठौर कुमार।

तवाजलकुमार चन्द्रवंशी वंश से सम्बन्धित योग्य पुरुष था और राठौर कुमार सूर्यवंशी महाराजा पुरुषोत्तम राम के वंश से सम्बन्धित महान व्यक्ति था।

अंगाऋषि ने चारों उपस्थित व्यक्तियों को कर्तव्य सम्बन्धी उपदेश दिया और मार्ग दर्शन किया कि वे सब वैदिक धर्म की रक्षा में जुट गये।

महर्षि ने आशीर्वाद दिया कि तुम चारों अपने आपको भ्राता की संज्ञा दोगे तथा तुम्हारे वंश अग्निकुल के नाम से कलान्तर में प्रसिद्ध होंगे।

प्रेमकुमार ने अपना कार्य क्षेत्र वर्धा नगरी, देंगलकुमार ने अपना कार्य क्षेत्र गुजरात में पत्तन के निकट चुना। यह चारो सूर्मा भविष्य में अग्निकुल के नाम से प्रसिद्ध हुये।

## प्रेमकुमार व देंगल कुमार की अद्वितीय सफलतायें

प्रेमकुमार व देंगल कुमार का समय ईसा से १२५ वर्ष पूर्व निश्चित किया गया है।

सर्व प्रथम दोनों भाईयों ने बौद्ध अनुयायी वर्धा नगरी के राजा के विरुद्ध युद्ध का बिगुल बजा दिया। भयानक युद्ध पश्चात वे विजयी हुये।

उस युग मे बुद्ध मत का बोलवाला था। अनेक बुद्धमत के अनुयायी राजे किसी एक राजा के आधीन न थे। छोटे छोट राज्य तमाम भारत में विस्तृत थे।

बुद्ध मत व वैदिक धर्म के अनुयायी राजा एक दूसरे से युद्ध करते रहते थे।

प्रेमकुमार व देंगलकुमार अंगा ऋषि का आशीर्वाद प्राप्त कर, धर्म यज्ञ समझकर युद्ध क्षेत्र में कूद पड़े।

अनेक युद्ध हुये। बौद्ध राजा व इनकी अनेक भयानक टक्करें हुई। इन दोनों भ्राताओं की एक के पश्चात अनेक विजय पताकायें फेहरती गई। सहस्त्रों शत्रु वंश नष्ट भृष्ट हो गये।

एक के पश्चात अनेक क्षेत्रों पर उन्होंने विजय प्राप्त की।

प्रेमकुमार ने अपनी राजधानी वर्धा नगरी स्थापित की और देंगल कुमार ने गुजरात के पत्तन स्थान में अपनी राजधानी बनाई।

प्रेम कुमार मालवार वंश के संस्थापक माने जाते हैं। इनके एक पुत्र धारानाथ हुआ। धारानाथ के चार पुत्र इन्द्र, सामरक्ष, धर्मरक्ष, दावरक्ष उत्पन्न हुये।

इन्द्र, प्रेम कुमार का ज्येष्ठ पुत्र था। प्रेमकुमार के पश्चात इन्द्र उनका उत्तराधिकारी बना।

इन्द्र के दो पुत्र उत्पन्न गन्धर्व व वीरभद्र उत्पन्न हुये।



गन्धर्व ज्येष्ठ पुत्र था। इन्द्र के पश्चात उसको राजगद्दी का उत्तराधिकार प्राप्त हुआ।

गन्धर्व महान राजसिद्ध हुआ। उसने अपने भ्राता के सहयोग सहित ६० वर्ष तक राज्य किया और राज्य का प्राप्त विस्तार किया।

महाराज गन्धर्व के तीन पुत्र कर्ण, विक्रमादित्य और भर्तृहरि थे।

प्रोढ़ अवस्था में गन्धर्व ने तीनों पुत्रों को राज्य कार्य के उपयुक्त शिक्षा देकर बानप्रस्थाश्रम ग्रहण कर लिया।

कर्ण, महाराज गन्धर्व के ज्येष्ठ पुत्र थे। वह सिंहासनारूढ़ हुये परन्तु उनकी आयु कम थी। वह बौद्धों के साथ युद्ध करते हुये संसार से चल बसे।

## महाराजा भृतहरि

कर्ण के स्वर्गारोहण के पश्चात एर विचित्र समस्या उत्पन्न हुई। विक्रमादित्य जिनका राज्य पर अधिकार था उन्होंने राजा बनने से स्पष्ट इंकार कर दिया और जबलपुर के निकट नर्वदा तट पर स्थित गुरुकल में ही ईश्वराधना व तपस्वी जीवन ब्यतीत करना उपयुक्त समझा।

जबलपुर में नर्वदा तट पर स्थित इसी गुरुकल में विक्रम व भृतहरि ने १५ वर्ष तक विद्या ग्रहण की थी।

विक्रमादित्य की स्पष्ट अस्वीकृति के कारण भृतहरि को राज्यगद्दी पर बैठना पड़ा।

भृतहरि ने राज्य कार्य सम्हाल लिया। मन्त्रीमण्डल की सम्मति को

मानकर विवाह भी कर लिया। परन्तु राज्य कार्य उनकी मानसिक अवस्था के अनुकूल न था।

राज्य के ऐश्वर्य व सुख उनको आकर्षित नहीं कर सके। राजवस्त्र, भूषण त्याग साधुओं का वेश धारण करके महात्मा गोरखनाथ के शिष्य बनकर गये और शीघ्र ही पूर्ण वैरागी बन जंगल को चले गए।

महात्मा गोरखनाथ से ज्ञान प्राप्त करके उन्होंने अनेक योग व शिक्षा सम्बन्धी पुस्तकें लिखी।

महात्मा भृतहरि के चार ग्रन्थ, नीति शतक, श्रृंगार शतक व योगशतक, श्रंगारशतक आज भी संसार का मार्ग दर्शन कर रहे हैं।

महात्मा भृतहरि ने संसार को उपदेश दिया :—

१—मुर्खों के साथ रहने की अपेक्षा जंगल में रहना स्वग समान है।

२— क्रोध मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है।

३—मनुष्य योनि से लाभान्वित होने का उत्तम उपाय यही है कि वह धर्मात्मा बने, गुणवान हो, सदाचारी बनते हुए देश जाति व धर्म की बढ़ोतरी करे।

४—काम, वासना, व्यक्ति को अधोगति की ओर ले जाते हैं। अतएव श्रेष्टता प्राप्त करने के लिए इनसे बचना परम आवश्यक है।

५—श्रेष्ट मनुष्यों की संगति से सुख प्राप्त होता हैं, दुर्जनों की परछाई भी अहितकारी होती है।

६—श्रेष्ट मित्र का गुण है कि वह शुभचिन्तक हो, दुर्गणों को दूर कराने में सहायक हो।



७—दूसरों की सहायता श्रेष्ठता की ओर ले जाती है।

८—अच्छे व बुरे समय का सामना दृढ़ता पूर्वक करना ही एक सदपुरुष का श्रेष्ट लक्षण है।

९—वेद विद्या ही श्रेष्ट विद्या है।

१०—विलास प्रियता बुद्धि को मलीन करती है। सुविचार मनुष्य को उन्नति के कारण शिखर की ओर अग्रसर करती है।

११—प्रेम पूर्वक व्यवहार ही सदगुण समपन्न व्यक्ति का महान लक्षण है।

भृतहरि के उपदेश जब तक संसार में प्राणि मात्र जीवित है अमर रहेंगे।

## महाराज विक्रमादित्य

भृतहरि राज्य त्यागकर संसार से विमुख हो गए। राज्य सिंहासन रिक्त हो गया।

राज्य सिंहासन रिक्त देखकर देवास नामक व्यक्ति ने हमला कर दिया और राज्य पर अधिकार कर लिया।

जनता व दूसते शुभाकांक्षी राजा महाराजाओं को यह अरुचि कर लगा।

उस समय विक्रमादित्य गुरुकल में ईश्वर भक्ति व तपस्या में लीन थे।

धनी मानी, मन्त्री, ब्राह्मणों व विद्वानों का एक दल विक्रमादित्य पे मिलने गया। उन्होंने विक्रमादित्य को राज्य की स्थिति से अवगत कराया और प्रेरणा दी कि किस प्रकार उनका जग प्रसिद्ध प्रदेश दुष्ट देवास के आधीन हो गई है।

भृतहरि का राज्य त्याग व राज्य की विचित्र परिस्थिति के विषय में सुनकर विक्रमादित्य आश्चर्य निमग्न हो गए।

उपस्थित सज्जनों के विचार हृदयगम करते हुए उन्होंने कहा यदि प्रभो की यही इच्छा है तो मुझे स्वीकार है। मेरा कर्त्तव्य संसार के दुखों से विमुख होना भी नहीं है। देश धर्म व जाति प्रतिष्ठा भी सर्वोपरि है।

महात्मा के वस्त्र त्यागकर विक्रमादित्य ने महाराज के भूषण ग्रहण किए। देवास को राज्य से निकाल कर बाहर किया। देवास की हार हुई। विक्रमादित्य की जय जयकार होने लगी। देश में शांति की स्थापना हो गई।

उसी युग में स्थन नामक जाति ने विद्रोह कर दिया। विक्रमादित्य ने सफलता पूर्वक उस विद्रोह को दबा दिया।

विक्रमादित्य की शक्ति अनन्त होती जा रही थी। उसका सिक्का सम्पूर्ण आर्य वर्त पर विस्तृत होता गया।

उसके सुप्रबन्ध, न्याय व धर्म राज्य की प्रसिद्धी चारों ओर फेलती गई। प्रत्येक राजा महाराज विक्रमादित्य के विशाल राज्य के अन्दर स्वयं ही प्रवेश करने लगे।

महाराज विक्रमादित्य के नवरत्न उज्जवल व ज्वलन्त नक्षत्र के समान प्रसिद्ध हुए।

१—धनवन्तरि :—आर्यवर्त में अति प्रसिद्ध वैद्य था।

२—क्षपणक :—विचार विमर्श के लिये अत्यन्त ज्ञानवान व्यक्ति था।

३—अमरसिंह :—अमरसिंह महान ग्रन्थ का रचयिता था।

४—शंकु :—उस युग का प्रसिद्ध तार्किक अथवा तर्क संगत



उत्तर देने वाला व्यक्ति था।

५—वैताल भट्ट :—प्रसिद्ध विहास्यक तथा प्रसन्न करने वाला व्यक्ति भी विक्रमादित्य के राज्य के नौ रत्नों में से एक था।

६—धरखर्पट :—मन्त्री मण्डल के प्रधान पद पर सुशोभित था।

७—कालिदास :—संस्कृत भाषा का महान प्रसिद्ध, अभिज्ञान शकुन्तला व अनेक प्रसिद्ध ग्रंथों का रचयिता व कवि भी उसी युग में था।

८—वराहमिहिर :—अति प्रसिद्ध ज्योतिर्विद्याविद् था।

९—वरचि :—प्राकृत व्याकरण का निर्माता था।

## विक्रम सम्वत

उक्त नवरत्नों ने परस्पर मन्त्रणा करके महाराज विक्रम को सम्बोधित किया कि आप का राज्य उन्नति के चरम शिखर पर पहुँच चुका है। अतएव हम चाहते है कि आपके राज्य के स्थापन के स्मरण को चिरस्थाई बनाने के लिये विक्रम सम्वत प्रचलित करे।

विक्रमादित्य ने मन्त्रीमण्डल को सम्बोधित करते हुए कहा कि आपका यह सोच विचार उचित नहीं। आप विद्वान है। आप जानते हैं कि सम्वत का प्रचलन वही राजा कर सकता है जिसका भूमण्डल पर राज्य हो।

आपसे क्या छुपा है कि हमारे पड़ोसी देश रूम का अत्याचारी राजा कैसरजोलीस है। जिसने अत्याचारों की चरम सीमा उपस्थित कर रखी है, अनेक छोटे आधीन राजाओं को पराजित कर बंदी-ग्रह में रखा हुआ है। जिसके सम्मुख योरुप व एशिया के अनेक झुककर नमन करते हैं। इसलिए में सम्वत अपने नाम से चलाने

की उपयुक्त स्थिति में नहीं हूं।

मण्त्रीमण्डल ने महा·ाज विक्रम के विचार ध्यान पूर्वक सुने। विचार विमर्श करे रूम के महाराज जोलिस पर आक्रमण का निर्णय की योजना महाराजा के सम्मुख की।

पूर्ण मन्त्रणा व विचार विमर्श के पश्चात महाराजा विक्रम ने महाराजा जोलिस पर आक्रमण कर दिया।

घमासान युद्ध के पश्चात महाराजा विक्रम को विजय प्राप्त हुई। जोलिस के कारावास में बन्द राजा महाराजाओं को स्वतत्र किया और जोलिस को बन्दी बनाकर भारत लाया गया।

भारत में जोलिस को मण्त्रणा करके उसका यथोचित सत्कार किया। उसने तमाम भारतवर्ष की यात्रा की ओर पुनः रूम का राज्य प्रदान करके वापिस भेज दिया।

इस प्रकार सारे भू मण्डल पर प्रभुत्व स्थापित करने के पश्चात विक्रमी सम्वत् प्रचलित करने की महाराजा विक्रम ने आज्ञा दे दी।

अनेक विद्वानों ने विक्रम को विक्रमादित्य की उपाधि से विभू॰ षित किया।

महाराजा विक्रम उसके पश्चात महाराजा विक्रमादित्य के नाम से संसार प्रसिद्ध हुए।

महाराजा विक्रमादित्य के केवल एक कन्या थी। पुत्र कोई न था।

महाराजा के राज्य के अन्तिम दिनों के गाथा करुण ही है।

कश्मीर पर राजा विक्रमादित्य का आधिपत्य था। कश्मीर का भूतपूर्व सम्राट कनिष्क जंगलों में सेना एकत्रित करके अपना राज्य वापिस करने की योजना में जुटा हुआ था।



उसी समय यकायक कनिष्क की भेंट एक युवक शालिवाहन से हुई।

शालिवाहन की प्रतिभा से कनिष्क सम्मोहित हो उठा और उसे अपनी सेना में उच्च पद पर सुशोभित कर दिया।

शालिवाहन ने योजना बद्ध तरीके से विक्रमादित्य के राज्य पर आक्रमण कर दिया।

विक्रमादित्य वृद्ध अवस्था को प्राप्त कर रहा था। इस युद्ध में शालिवाहन की जीत हुई और विक्रमादित्य का सेनापति भात्री गुप्त पराजित हुआ और कनिष्क ने कश्मीर पर आधिपत्य जमा लिया।

शालिवाहन शूरवीर व पराक्रमी व्यक्ति था। उसने विक्रमादित्य की राजधानी जो उन दिनों उज्जैन थी उसपर आक्रमण कर दिया।

घमासान युद्ध हुआ। विक्रमादित्य घायल हो गये। विक्रमादित्य की महारानी सिखावित्री शस्त्र लेकर कनिष्क के सम्मुख रणक्षेत्र में जा डटी। वह वीर स्त्री थी। रक्त की नदियाँ बह गई। इस युद्ध में विक्रमादित्य के नवरत्नों में से केवल चार शेष रहे।

वीर विक्रमादित्य व सिखावित्री ने एक साथ ही प्राण त्याग दिये।

विक्रमादित्य मर कर भी अमर हो गये। उनकी देश भक्ति, धर्म प्रेम, विद्यानुराग, परोपकार, दानवीरता, व सम्वत का नामांकन जब तक भूमण्डल संसार में है, उनकी याद पुनर्जीवित करता रहेगा।

## कुमार देगंल

प्रेमकुमार के अनुज भ्राता था। अङ्गा ऋषि की आज्ञानुसार उसने अनेक बौद्ध राजाओं को परास्त कर स्वतन्त्रत राज्य स्थापित किया। अपनी राजधानी गुजरात प्रान्त के पत्तन नामक स्थान पर स्थापित की।

इन्हीं के धंश क्रम में एक सुधी सन्थाल अधिपति उत्पन्न हुआ था।

दूसर एक पुत्री तथा एक पुत्री उत्पन्न हुई। पुत्री सिखवित्री का विवाह महाराजा बिक्रमादित्य से हुआ।

पुत्र शालिवाहन चार वर्ष की अवस्था में एकाएक गुम हो गया।

राजा सुधि पुत्र वियोग सहन न कर सका और पुत्र वियोग में दुखी जंगलों में तपस्या हेतु चला गया।

## शालिवाहन

शालिवाहन का अन्य नाम शाक भरन भी था।

पिता के गृह से गुम होने के पश्चात देवगति से यह बालक एक कुम्भवार को मिल गया।

कुम्भकार के गृह इसका पालन पोषण होता रहा। कुम्भकार के कारण यह भव्य बालक राजा त्रिहुत की सेवा में पहुँच गया।

राजा त्रिहुत के एक पुत्र चकन्धर शिखर व पुत्री चन्द्रकुमारी थी।

शालीवाहन व चन्द्रकुमारी का सम्पर्क बढ़ता गया। आयु के साथ-साथ सम्पर्क ने प्रेम का रूप धारण कर लिया।

एक दिन राज्य से दूर जंगल में दोनों ने परस्पर विवाह कर लिया। राजा रानी इस विवाह से अन्जान ही बने रहे।

उन्हीं दिनों राजा त्रिहुत ने श्यामचरण मोर्य को चन्द्रकुमारी के वर के रूप में ढूंढ़ा।

चन्द्रकुमारी दुर्बल विचारों की युवती थी उसका विवाह श्याम-चरण मौर्य से हो गया।

विवाह के पश्चात भी शालिवाहन व चन्द्रकुमारी का सम्पर्क कम न हुआ। एक दिन श्यामचरण मौर्य ने रंगे हाथों उन दोनों को पकड़ लिया।



चन्द्रकुमारी ने भागने का व्यर्थ प्रयत्न किया और वह मारी गई। शालवाहन भाग निकला और भविष्य में कश्मीर अधिपति राजा कनिष्क की सेना का सेनापति बना और विक्रमादित्य से युद्ध किया।

विक्रमादित्य के पश्चात शालीवाहन ने अनेक प्रान्त जीते और विशाल राज्य का सम्राट बना।

## ढ़ाऊदेव

महाराजा अग्रसेन के छटे पुत्र थे। इनकी राजवशी रानी से उत्पन्न एक मात्र पुत्र झालामल का नाम पुराणों में मिलता है। इनके वंशज रतनसिंह व चेतराम हुए। रायां मकलापुर नगरी की वंशावली में इसका उल्लेख मिलता है।

## कुमार वीरमान

यह महाराजा अग्रसेन के सातवें पुत्र थे। इनकी सन्तानों के विषय में पुराण इतिहास में कुछ वृतान्त भी नहीं मिलता।

## कुमार वासुदेव

महाराजा अग्रसेन के आठवें पुत्र थे। इनकी राजवशी रानी से उत्पन्न एक मात्र पुत्र शीलामल के विषय में पुराणों में साधारण जानकारी प्राप्त होती है।

शीलामल के पुत्र चन्द्र ने चन्देरी को बसाया था। इसी के वंश में शिशुपाल हुआ था, जिसने चन्देरी पर कुशलतापूर्वक राज्य किया था।

## कुमार जीत जनक

कुमार जीत जनक महाराजा अग्रसेन का नवां पुत्र था। इनकी नागवंशी रानी से उत्पन्न दूसरे पुत्र के वंशजों में उत्पन्न सन्तान धर्मसेन ने अग्रपुराणानुसार अग्रोहे के नाश में सहयोग दिया।

## कुमार मन्त्रपति

कुमार मन्त्रपति महाराज अग्रसेन के दशवें पुत्र थे। इनके नागवंशी रानी से उत्पन्न छोनाश्व सन्तान से ओसवाल वंश की उत्पत्ति हुई और छजाश्व की सन्तानों से अयोध्यावासी बारहसेनी उत्पन्न हुए।

## कुमार अमृतसेन

कमार अमृतसेन महाराजा अग्रसेन के ग्यारहवें पुत्र थे। इनकी नागवंशी रानी से उत्पन्न पुत्र अमोखाश्व की सन्तान से रस्तोगी वंश की उत्पत्ति दृष्टिगोचर होती है। शेष वृतान्त प्राप्त नहीं हुए।

## कुमार इन्द्रमल (इन्द्रसेन)

कुमार इन्द्रमल के सन्तान सम्बन्धी विशेष वृतांत पुराण आदि में उपलब्ध नहीं है।

## कुमार ताराचन्द्र

कुमार ताराचंद्र महाराज अग्रसेन के तेरहवे पुत्र थे। इनके विषय में विशेष व्याख्या उपलब्ध नहीं है।

## कुमार सिन्धुपति

यह महाराजा अग्रसेन के चौदहवे पुत्र थे। इनकी नागवंशी रानी एलादेवी से उत्पन्न सबसे ज्येष्ठ पुत्र हमेलाश्व का वर्तान्त आदि ग्रंथों में मिलता है।

हमेलाश्व की संतान में ही कपिलवस्तु के राजा शुद्धोधन का नाम प्राप्त होता है। शुद्धोधन की धर्मपत्नि माया से सिद्धार्थ ई० पू० ५६७ में उत्पन्न हुआ था।

सिद्धार्थ का लालन पालन सोतेली मां गौमती की देखरेख में



हुआ। जीवन के तमाम सुख उपलब्ध होने पर भी यह बालक बचपन से ही चिन्तन शील प्रकृति का रहा।

## महात्मा बुद्ध की शिक्षा

भविष्य में यही बालक सिद्धार्थ भगवान बुद्ध के नाम से प्रसिद्ध हुए- जिसने संसार को अहिंसा व समानता का पाठ पठाया। भगवान बुद्ध के उपदेश संसार में प्रसिद्ध मानव जाति का मार्ग दर्शन कराते रहेंगे। बुद्ध मत के करोड़ों की संख्या में अनुयायी आज भी विश्व में मार्ग दर्शन करा रहें हैं।

## कुमार तम्बोल

कुमार तम्बोल महाराज अग्रसेन के पन्द्रहवे पुत्र थे। प्रायः राजपूत अपने आपको तम्बूल के वंशज मानते हैं। और उनकी राजवशीं रानी से उत्पन्न ज्येष्ठ पुत्र पृथुमल को अपना पूर्वज मानते हैं। और अपनी उपाधि 'अग्रवत' रखते हैं।

## कुमार नृसिंह (नारसेन)

कुमार नृसिंह महाराजा अग्रसेन के सोलहवे पुत्र थे। इनका विशेष वृतांत पुराण व इतिहास में प्राप्त नहीं है।

## कुमार माधोसेन

कुमार माधोसेन महाराजा अग्रसेन के सत्रहवे पुत्र थे। इनका भी विशेष वृतांत आदि ग्रंथों में उपलब्ध नहीं है।

## कुमार गोधर

कुमार गोधर महाराजा अग्रसेन के अठारहवे पुत्र थे।

इनके राजवशीं रानी से उत्पन्न ज्येष्ठ पुत्र के वशंज 'गोठाकुर' वंशावली प्रयाग के अनुसार गोठाकुर कहलाई।

गोधर के नागवंशी रानी से उत्पन्न छोटे पुत्र हंसदेव की संतान के वंशज 'हंसठाकुर' वंशावली के अनुसार हंसाठाकुर कहलाई।

## महाराजा नन्द

ईसा पूर्व ३२७ वर्ष पूर्व अग्रोहे के राज्य सिंहासन पर महाराजा नंद का शासन था। उस समय प्रत्येक वंश का मुख्य व्यक्ति अपने वश का राजा कहलाता था। इस प्रकार अग्रोहें मैं अग्रवाल वंश के एक सौ राजा महाराजा नंद के आधीन थे। इनमें नंद का भतीजा भी एक घराने का मुख्य राजा था।

कहते हैं कि सिकंदर ने अग्रोहा पर अनेक आक्रमण किए, परंतु अग्रवंश की एकता और पराक्रम के प्रभाव से वह अनेक वार बुरी तरह हारा। यही एक कारण था कि उसके दिल में नंद वँश की धाक जम गई। उसकी सेना ने आगे बढ़ने से इंकार कर दिया।

यह घटना सिकंदर-पोरस के युद्ध के पश्चात की है।

सिकंदर के पोरस व अग्रोहा से युद्ध में सिकंदर की सेना के आत्म-सम्मान पर चोट की।

सिकंदर ने महाराज नंद के दरबार में अपना दूत बातचीत के लए भेजा।

नद के भतीजे अमरसेन ने दूत को डांट दिया और युद्ध के लिए ललकारा।

सिकंदर ने अपना दूत राजा रतन सेन के पास महाराजा नंद से पृथक व फूट डालने के लिए भेजा।

रतनसेन के वशंज धर्मसेन तथा कुलघाती गोकुल चंद के अविवेक पूर्ण दृष्टिकोण के कारण एक भयंकर युद्ध हुआ। जिसमें अग्रोहा नगर सम्पूर्ण विनाश हो गया। इस प्रकार २३०१ वर्ष पूर्व अग्रोहा विनाश के कगार पर पहुंच गया तथा उसी समय से विकृत खण्डहर के रूप में नष्ट-भ्रष्ट पड़ा है।

# उपलब्ध वंशावली

## अग्रवाल वंशज

महाराजा साम्भूमन के दो पुत्र थे।

(१) प्रियव्रत (२) ओतानपाद

## सात द्विपों के नामों

(१) जम्बू द्वीप (२) वृक्षित द्वीप (३) शाखा द्वीप (४) कोसर द्वीप (५) क्रोंच द्वीप (६) शाल्यल द्वीप (७) पोखर द्वीप।

प्रियव्रत के वंश में बहुत वर्ष बाद उत्पन्न अग्निधर के ६ पुत्रों के नाम :

(१) यमपुरक (२) सरवरसन (३) एलाहृत (४) रमेक (५) हृनययी (६) कोर (७) मद्राश्च (८) कतुमाल (८) रशभ

प्रियधर के वंश में उत्पन्न हुये अन्य राजाओं के नाम :

(१) अग्नि (२) सत (३) नाभ (४) भरत (५) दनास (६) दोपस (७) स्मांत (८) रश्वन्धरा (९) भ्रम (१०) समर्थ (११) ओनी (१२) भरत

## ओतानपाद वंश के प्रसिद्ध राजा

(१) ध्रुव (२) क्लव (३) ओकल (४) पितृरथ (५) अंग (६) प्रथु (७) प्रजास (८) वारघ (९) सूगल (१०) सत्यजित (११) प्राचवन (१२) हरिकस (१३) प्रच्यवन (१४) वछ (१५) सूर्य

## विश्व वंशज प्रसिद्ध राजा

(१) ग्रीव (२) हृण्यकश्यप (३) प्रह्लाद भक्त (४) चन्द्र

## सूर्य्य वंश के प्रसिद्ध राजा

(१) वैवस्वतमनु (२) अक्ष्वाकु (३) विकवछ (४) पूर्णज्या (५) काक्षते (६) अनेनास (७) पृथु (८) विश्वारधु (९) चन्द्र (१०) जमनाम (११) सचिए (१२) हरिविदस्त (१३) कोहलियासर (१४) दरीढासर (१५) हरजस सत्र (१६) निकम्वा (१७) सहत्यासर (१८) त्रिसासुइ (१९) कृष्ण (२०) संजीत (२१) जानबास (२२) मानधाता

## राजा मानधाता के पुत्र :

(१) परीक्ष (२) मचकन्द (३) अम्बरीष

(१) राजा परीक्ष के वंशज मर्यादा पुरषोत्तम राम हुये।

(२) राजा अम्बरीष के वंश में महाराजा ब्रह्मर्षि हुए।

## महाराजा ब्रह्मर्षि के वंशज

(१) प्रकाश (२) ताश (२) मकर (४) कन्द (५) मोहाल (६) जालंध (७) नभ (८) केवल (९) ब्रहंजा (१०) ब्रहम्यु (११) मैन (१२) मध्यमा (१३) करम्भ (१४) भूर (१५) लोकेश (१६) दहदी (१७) सूरन (१८) समर्थ (१९) सुतेज (२०) नहपग (२१) अंजमंत (२२) श्याम।

## वंशावली महाराजा श्याम

१. सुभाग २. बीमाकर ३. मनिमोहन ४. पूरणकर ५. बही-लोक ६. चूणामनी ७. गजराध।



## वंशावली महाराजा गजराध

१. गजराध २. रंगाधी ३. स्वमेपामऽल ४. मधु ५. श्राद्धी ६. अशोध ७. पेजस ८. डण्डन ९. अंगसीस १०. अमानसीस ११. महाराजा महीधर।

## महाराजा महीधर के पुत्रों की सूची

१. अग्रसेन २. मुकन्दी ३. मनुध्वज ४. तिलाधर ५. हेमलू ६. सिदिसेन ७. सुरयाल।

## महाराजा अग्रसेन के रानी सुन्दर वती से उत्पन्न पुत्रों की सूची

१. विशपदेव (गुलाबदेव) २. गेंदूमल ३. करनचन्द्र ४. मणिपाल (कानकुन्द) ५. वलन्दा (बन्धुमान) ६. ढाऊदेव ७. सिन्धुपति ८. जीतजनक ९. मन्त्रपति

## महाराजा अग्रसेन के रानी धनपाला से उत्पन्न पुत्रों की सूची

१. तम्बूल २. ताराचन्द ३. वीरमान ४. वासुदेव ५. नृसिंह (नारसेन) ६. अमृतसेन ७. इन्द्रभल (इन्द्रसेन) ८. माधोसेन ९. गोधर।

## महाराजा अग्रसेन के १८ पुत्रों की राजवंशी सन्तानों की सूची

१. विशपदेव (गुलाब देव)

धर्मपत्नि—पोवनन्द्रा

पुत्र—१. अन्तामल २. प्रभामल ३. सूभामल ४. मामीमल
पुत्रियाँ—१. प्रेमी पारोदेवी २. पूमावन्ती ३. गंगादेवी

२. गेंदूमल : धर्मपत्नि—चन्द्रावती
पुत्र—१. पाराश्वो २. सदाश्वो ३. उमाश्वो ४. नमाश्वो
पुत्रियां—१. नमोसी २. नारायणी ३. मधुवन्ती ४. अर्घावती

३. करनचन्द्र : धर्मपत्नि—सिद्धवन्ती
पुत्र—१. सिन्धु पति, पुत्रियाँ—१. विदयावन्ती

४. मणिपाल (कानकुन्द) : धर्मपत्नि—हंसावती
पुत्र—१. चेलादास २. भोरामल, पुत्री—१. मंगलवंती

५. वलन्दा (बन्धुमान)
धर्मपत्नि—असावती
पुत्र—१. गीतामल २. दारामल ३. सूर्यभान, पुत्री—तारावती

६. ढाऊदेव : धर्मपत्नी—उरस्ता
पुत्र १. झालामल पुत्री, १. इन्द्रावती

७. वीरभान : धर्मपत्नि—चन्द्रदेवी
पुत्र—१. जीतसिंह, पुत्री—१. प्रेमवन्ती

८. वासुदेव : धर्मपत्नि—स्वयमदेवी
पुत्र—शीलामल, पुत्री—शिवदेवी

९. जीतजनक : धर्मपत्नि—समावन्ती
पुत्र—१. सोमामल २. सोठामल
पुत्रियां—१. श्यामदेवी २. स्यांगी ३. सुन्द्रावती

१०. मंत्रपति : धर्मपत्नि—अमीरा देवी
पुत्र—१. शिवदास, पुत्री—१. वानोवन्ती

११. अमृतसेन : धर्मपत्नि—माधोवन्ती



पुत्र—१. नोलामल २. सहवामल, पुत्री—१. वालीदेवी

१२. इन्द्रमल (इन्द्रसेन) : धर्मपत्नि—लोकान्देवी
पुत्र—१. सेवामल, पुत्री १.—शामवन्ती

१३. ताराचन्द : धर्मपत्नि—लोरंगदेवी
पुत्र—१. अरोढामल २. धमूमल, पुत्री—१. डलवन्ती

१४. सिंधुपति : धर्मपत्नि—वसन्ती
पुत्र—१. नशवमल, पुत्री—१. नृशीदेवी

१५. तम्बूल : धर्मपत्नि—गोन्ती
पुत्र—१. पृथुमल २. गोखीमल
पुत्रियां—१. सानदेवी २. गमान देवी

१६. नृसिंह (नारसेन) : धर्मपत्नि—सीलवन्ती
पुत्र—१. गेंदामल, पुत्री—१. खलमदेवी

१७. माधोसेन : धर्मपत्नि—मोहनी
पुत्र—१. जैसीमल २. छजामल, पुत्री—१. जसोदा देवी

१८. गोधर : धर्मपत्नि—तारावती
पुत्र—१. दूधामल २. शुभामल
पुत्रियां—१. चम्पावती २. चम्पादेवी

## महाराजा अग्रसेन के १८ पुत्रों के नाग वंशी सन्तानों की सूची :

१. विशपदेव (गुलाबदेव)
धर्मपत्नि—पुना देवी
पुत्र...१. अन्तामल २. तनवर ३. हरिमामल ४. शोमामल नेमी
पुत्रियाँ...१. प्रेमदेवी २. पारावन्ती ३. ज्ञानवन्ती ४. गंगा-कुमारी

२. गेंदूमल : धर्मपत्नि—तम्बोल देवी
पुत्र...१. वारश्व २. खराश्व ३. रम्भाश्व ४. तपेश्व
पुत्रियां...१. नेमवन्ती २. नारायणी ३. वेदवन्ती

३. करनचन्द : धर्मपत्नि—कुसनीति
पुत्र...१. दग्धाश्व २. वेधाश्व
पुत्रियाँ—१. मगनी २. खेमी परशेनी

४. मणिपाल (कानकुन्द) : धर्मपत्नि...विशनदेवी
पुत्र...१. जरधाश्व २. मरधाश्व
पुत्रियां...१. मदोवन्ती २. भागवन्ती

५. वलन्दा (बन्धुभान) : धर्मपत्नि=पाली देवी
पुत्र=१. पाराश्व २. मन्दराश्व ३. ताराश्व
पुत्रियां...१. योग्यवन्ती २. गोरखवन्ती ३. धनवतीं

६. ढाऊदेव : धर्मपत्नि—उमादेवी
पुत्र—१. किशोर सेम २. निरंजनसेम ३. अमृत सेन
पुत्रियाँ—१. हेमवन्ती २. होमवन्ती ३. केलावन्ती

७. वीरभान : धर्मपत्नि=शोभवन्ती
पुत्र=१. पोकराश्व २. जयजाश्व ३. मारगधाश्व
पुत्रियां=१. फलवन्ती २. फुलोवन्ती ३. वसन्ती

८. वासुदेव : धर्मपत्नि=गोमती
पुत्र—१. वारोसेन, पुत्री=१. उमावन्ती

९. जीतजनक : धर्मपत्नि=हीरादेवी
पुत्र=१. चन्द्रसेन २. चरनसेन ३. योगनाश्व
पुत्रियाँ=१. चम्पादेवी २. चोखादवी ३. चढवन्ती

१०. मन्त्रपति : धर्मपत्नि=गोमन्दी
पुत्र=१. छोनाश्व २. चोखाश्व ३. छजाश्व
पुत्रियाँ=१. योगवन्ती २. चारादेवी ३. जमनी देवी



(११) अमृतसेन : धर्मपत्नि=अमरावती
पुत्र—(१) अमोखाश्व (२) अमराश्व
पुत्रियाँ—(१) तमरादेवी (२) त्रिचमनी

(१२) इन्द्रमल (इन्द्रसेन) : धर्मपत्नि—केशोदेवी
पुत्र—(१) राधाश्व (२) रामाश्व (३) अश्वाश्व
पुत्रियाँ—(१) एमवन्ती (२) एजरावन्ती (३) रूपावन्ती

(१३) ताराचन्द : धर्मपत्नि—लडवन्ती
पुत्र—(१) वरधामल (२) डोगरमल (३) तीक्ष्ण
पुत्रियाँ—(१) मनुवन्ती (२) मोगीदेवी (३) तानवन्ती

(१४) सिन्धु पति : धर्मपत्नि—एलादेवी
पुत्र—(१) हमेलाश्व (२) वहदाश्व (३) गोधराश्व
पुत्रियां—(१) नमोवन्ती (२) सरस्वती (३) लाजवंती

(१५) तम्बूल : धर्मपत्नि—रामावन्ती
पुत्र—(१) जमालाश्व (२) टोटाश्व (३) तोमराश्व
पुत्रियाँ—(१) निकवन्ती (२) टोटावन्ती (३) कूदवन्ती

(१६) नृसिंह (नारसेन) : धर्मपत्नि—आशावती
पुत्र—(१) भोजाश्व (२) भूमाश्व (३) भरतश्व
पुत्रियाँ—(१) सलोनादेवी (२) सरूपादेवी (३) सामादेवी

(१७) माधोसेन : धर्मपत्नि—नोरंगदेवी
पुत्र—(१) उमादेवी (२) भूपदेव
पुत्रियां—(१) प्रेमवन्ती (२) सूमवन्ती

(१८) गोधर : धर्मपत्नि—मधुवन्ती
पुत्र—१. इश्वराश्व २. खराश्व ३. हंसदेव
पुत्रियाँ=१. एलावंती २. प्रवांदेमी

# महाराजा अग्रसेन के वंशजों की उपलब्ध वंशावली

## महाराजा अन्तामल

अन्तामल के वंशजों में रनवीरजीत का नाम मिलता है जिसका युद्ध राजा कन्स से हुआ था।

रनवीरजीत के कुल में ही वेरीभामल का पौत्र प्रणचन्द्र अग्रोहा के सिंहासन पर विराजमान हुआ था।

## महाराजा जरासिन्ध

महाराजा जरासिन्ध की वंशावली भागवत पुराण पर आधारित है।

| | |
|---|---|
| (१) जरासिन्ध | (२) सहदेव |
| (३) सरयाश्व | (४) आयुत्व |
| (५) नरमित्र | (६) सूनीकातर |
| (७) दरहितसेन | (८) सेनजीत |
| (९) सूरज | (१०) पेदुहतरा |
| (११) सुचई | (१२) सम्पय |
| (१३) सूरत | (१४) धरम |
| (१५) सूसर | (१६) व्रतसेन |
| (१७) सुमति | (१८) सुबलि |
| (१९) सुनील | (२०) सत्यजीत |
| (२१) वसुजीत | (२२) रचंयें |

नोट—अन्य वंशावली व्याख्या विवरण के साथ पुस्तक में दी गई है। अतः देना आवश्यक नहीं है।

## लेखक परिचय

मेरा जन्म भारत की राजधानी दिल्ली में सम्वत १९९५ की अनन्त चौदस की शुभ बेला के अवसर पर हुआ था।

मेरा कुटुम्ब आगरा के प्रसिद्ध परिवार लाला मन्नामल छुन्नामल के कुटुम्ब से सम्बन्धित है।

मेरे पिता ला० रमेशचन्द जी अग्रवाल दिल्ली के पुस्तक प्रकाशक का कार्य गुप्ता एण्ड को० के नाम से आज भी कर रहे हैं जिसके फलस्वरूप प्रस्तुत पुस्तक प्रकाशन का यत्न किया है।

मेरे पिता अपने क्षेत्र के जाने-माने समाज सेवी व गौ भक्त हैं। उनका आर्य संस्कारों में अपूर्व विश्वास रहा है।

मेरे स्वसुर ला० बृजलाल आर्य टोहाना (हरियाणा) निवासी प्रो० गुप्ता एण्ड को० टोहाना का स्थान अपने क्षेत्र के प्रसिद्ध समाज सेवी व आर्य समाज भक्तों की श्रेणी में अग्रणी व्यक्तियों में से हैं।

मेरे बाबा ( पिता जी के चाचा जी ) श्री नारायण दास आज भी गर्ग जी के नाम से अपने क्षेत्र के प्रसिद्ध व्यक्ति हैं। वह स्वतन्त्रता संग्राम में अनेक बार जेल गये। अमर शहीद भगतसिंह, राम प्रसाद बिसमिल्ल आदि उनके समकालीन साथी थे। उन्हें १५ अगस्त १९७२ को स्वतन्त्रता सेनानी के रूप में सरकार ने ताम्रपत्र भेंट किया। ८० वर्ष की अवस्था में वे आजकल बान-प्रस्थ आश्रम ज्वालापुर हरिद्वार में निवास कर रहे हैं।

मेरे नाना मास्टर श्रीपतिलाल अपने युग के उन सुधारवादी व्यक्तियों में से थे जो ५० वर्ष पूर्व अछूतोद्धार में विश्वास रखते थे और स्वतन्त्रता संग्राम में जेल गये थे।

परिवार का प्रभाव जीवन पर अवश्य पड़ता है। अतः ईश्वर से प्रार्थना है कि अपने पूर्वजों का अनुकरण करते हुए आदर्श जीवन व्यतीत कर सकूं।

दिनांक ५ अप्रैल १९७५

—सुरेन्द्र प्रताप अग्रवाल

# एक अभूतपूर्व घोषणा

महाराजा अग्रसेन व उनके अनुयायियों के जीवन से सम्बन्धित एक वृहद पुस्तक प्रकाशन की योजना तैयार की गई है। जिसके अनेक आकर्षणों में से कुछ निम्न हैं :

पृष्ठ संख्या लगभग १००० अथवा अधिक।

अनेक प्रसिद्ध सुन्दर भवन तथा स्थलों का चित्रमय परिचय जिनका अनेकानेक अग्रवाल दानवीर महान व्यक्तियों ने जनहित निर्माण करवाया।

भूतपूर्व व वर्तमान अग्रवाल समाज के अनुयायियों का चित्र सहित जीवन परिचय।

अग्रवाल समाज में उत्पन्न हुये अनेक दानवीर तथा विद्वानों का जीवन परिचय।

उत्तम कागज, कपडा युक्त आकर्षक बाईन्डिग।

पुस्तक का मूल्य केवल २५) ब्लाक खर्च १०) पृथक।

पुस्तक सीमित संख्या में ही छप रही है। अतः ३५) का मनिआर्डर तथा ५०० शब्दों के अन्दर अपना जीवन परिचय भेजकर अपना स्थान आज ही सुरक्षित करवायें।

## अग्रवाल संस्मरण ग्रन्थ प्रकाशन

**गुप्ता पाकिट बुक्स**

६०/१३ रामजस रोड, नई देहला-५

दूरभाष : २६६४८४

यदि अपना जीवन परिचय स्वयं न लिख सकें तो अपने परिवार व जीवन के विषय में संकेत लिखकर भेज दें। हम उनको भाषानुसार ठीक करके ही प्रकाशित करवायेंगे।

**प्रकाशनाध्यक्ष**

लेखक

## सुरेन्द्र प्रताप अग्रवाल

प्रस्तुत पुस्तक महाराजा अग्रसेन के जीवन से सम्बन्धित है। पुस्तक में प्राचीनतम तथा आधुनिक उपलब्ध साहित्य द्वारा सिद्ध होता है कि मर्यादा पुरुषोत्तम महाराजा राम, महाराजा भरत, भगवान बुद्ध, महाराजा विक्रमादित्य, महात्मा भर्तृहरि, महाराजा चन्द्रगुप्त, महाराजा अशोक आदि प्रसिद्ध महान आत्माएँ अग्रवंश से सम्बन्धित थीं। पुस्तक ऐतिहासिक पुट लिये हुये है जिसमें महाभारत से पूर्व काल से लेकर, महाराजा भरत से भी हजारों वर्ष पूर्व के इतिहास का वर्णन करते हुये विक्रमी सम्वत् व ईसा सन् तक के अनेक रोचक तथ्य पाठकों के सम्मुख रखने का प्रयास किया गया है।